चन्दामामा
अगस्त १९७१
90 P

लज़्ज़तदार
मज़ेदार
ठंडा मीठा
पारले
एक्स्ट्रा-स्ट्राँग
पिपरमिण्ट
एक पैकेट में ९ पिपरमिण्ट—
कितनी कम कीमत पर!
मज़ेदार तरोताज़ा—
तरोताज़ा मज़ेदार
Gold Star
Peppermint
Parle
PARLE
everest/981/pp hin

हंसी से भरपूर कहानियाँ, कार्टून और पहेलियाँ।

महीने में दो बार, हर पहली तथा 15 तारीख को, अपने पत्र-विक्रेता से प्राप्त करें या 14 रुपये (24 अंक) 7 रुपये (12 अंक) भेज कर हमसे मंगवायें।

मूल्य प्रति अंक केवल 60 पैसे

अपने निकटतम न्यूज़ एजेंट से प्राप्त करें।

लोट पोट, ए-5 माया पुरी, नई देहली-27

SAYWAYS

ताज़गी के पास आइये
अपनी प्यास बुझाइये
गोल्ड स्पॉट की अनोखी ताज़गी और लाजवाब स्वाद का मज़ा लीजिये। इसमें आपको ताज़े फलों जैसा स्वाद मिलेगा। इसकी ताज़गी के क्या कहने! ऐसी ताज़गी तो आपको प्रकृति की गोद में झूलने वाले झरनों में ही मिल सकेगी। इसका रसास्वादन कर आप मस्ती में झूम उठेंगे।
जी भर के जियो... गोल्ड स्पॉट पियो!
GOLD SPOT
mcm/pb/39 hin

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
हमने फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता के लिए परिचयोक्तियाँ भेजने की अंतिम तारीख १० निश्चित की थी, किंतु चन्दामामा पहले की अपेक्षा दस दिन पूर्व ही प्रकाशित हो रहा है। भविष्य में भी हम यह क्रम चालू रखेंगे। अतः परिचयोक्तियाँ भेजने की तारीख हमने १० के बदले ५ निश्चित की है। आशा है, पूर्ववत् हमारे पाठक सहयोग देंगे।
वर्ष: २३ अगस्त १९७१ अंक: १२
CHITRA

अमर वाणी

यथा कंदुकपाते नो त्पत त्यार्यः पत न्नपि
तथा त्वनार्यः पतति मृत्पिंडपतनम् यथा ।। १ ।।

[बुद्धिवान का अगर पतन हो जाता है, तो वह गेंद की तरह फिर ऊपर उछलता है, पर मूर्ख का पतन होता है तो मिट्ठी के ढेले की भाँति वह वहीं पड़ा रहता है ।]

गज, भुजंग, विहंगम बंधनम्,
शशि, दिवाकर योर्ग्रहपीड़नम्,
मतिमताम् च विलोक्य दरिद्रताम्
विधि रहो बलवा निति मे मतिः ।। २ ।।

[हाथी, साँप, पक्षी आदि का पकड़ा जाना, सूर्य और चन्द्रमा में ग्रहण का लगना तथा बुद्धिमानों को दरिद्रता का शिकार होना, यह सब देखने पर मालूम होता है, प्रारब्ध कैसा शक्तिशाली है ।]

सृजति ताव दशेषगुणाकरम्
पुरुषरत्न मलंकरणम् भुवः,
तदपि त क्षण भंगि करोति चे
दहह कष्ट मपंडितता विधेः ।। ३ ।।

[प्रारब्ध पृथ्वी के लिए अलंकार प्राय पुरुष की सृष्टि करके क्षण में मार डालता है । ऐसा प्रारब्ध कैसा बुद्धिविहीन है ।]

प्रारब्ध

लक्ष्मी-विजय

भगवान विष्णु के मन में यह अहंकार पैदा हुआ कि वे ही समस्त सृष्टि के शासक हैं। उन्होंने एक बार अपनी पत्नी लक्ष्मी से कहा–"देवी, समस्त लोक मेरे अधीन में हैं। सारे प्राणी मुझ पर आधारित हैं, मेरे भक्त कभी भी तुम्हारी माया के जाल में नहीं फँसते।"

इस पर लक्ष्मी ने कहा–"स्वामी! यह सब आपका भ्रम है। समस्त सृष्टि की अधिकारिणी मैं हूँ। मेरी कृपा पाकर कोई भी श्रेष्ठ बन सकता है। यदि मेरी बात पर आपका विश्वास न हो तो हम अपनी अपनी शक्तियों की परीक्षा लेंगे।"

विष्णु ने मान लिया। दोनों योगी और योगिनी के वेष धरकर चल पड़े।

एक नगर में एक वैश्य था जो एक प्रसिद्ध विष्णुभक्त माना जाता था। जब मूसलधार वर्षा हो रही थी और ओले गिर रहे थे, बाहर ज़ोर की सर्दी पड़ रही थी, तब योगी रूप में स्थित विष्णु भगवान उस वैश्य भक्त के मकान के सामने सर्दी से ठिठुरते ठहल रहे थे।

वैश्यभक्त ने योगी को देखा और बड़े प्रेम से भीतर आने का उनका स्वागत किया और कहा–"भगवान, आप इसे अपना घर समझिये। इस घर में जो कमरा आपको अच्छा लगे, उसी में विश्राम कीजिये।"

योगी ने सारा घर घूमकर देखा, एक छोटे से कमरे के पास ठहरकर कहा–"मुझे यह कमरा अच्छा लगता है, मैं इसमें ठहरूँगा।"

"भगवान, यह कमरा आपके ठहरने लायक़ नहीं। इसमें फालतू सामान रखते हैं। आप इससे बढ़िया कमरा चुन ले तो अच्छा होगा।" वैश्यभक्त ने कहा।

विनय मोहन

"हम योगी हैं। हमारे लिए एकांत स्थान चाहिये।" योगी ने जवाब दिया।

लाचार होकर वैश्य ने उसी समय वह कमरा साफ़ कराया और योगी के लिए बिस्तर बिछवाया। योगी ने उस कमरे में प्रवेश करके दर्वाजा बंद किया और अर्गला चढ़ा दी। तब विष्णु ने अपने मन में सोचा—"मुझे अपने भक्त ने आश्रय दिया। मगर बेचारी लक्ष्मी का इस सर्दी में क्या होगा? उसे कौन आश्रय देगा? वह ज़रूर हार जायगी।"

इतने में योगिनी वेष में स्थित लक्ष्मी भी उसी वैश्य के घर के सामने आ पहुँची और सर्दी में ठिठुरने लगी। वैश्य उसके सौंदर्य को देख मुग्ध हुआ, बाहर आकर बोला—"देवीजी, इस भयंकर सर्दी में आप बाहर क्यों हैं? सर्दी तो और भी बढ़ती जा रही है। आपको अगर कोई आपत्ति न हो तो भीतर आकर विश्राम कर सकती हैं।"

योगिनी ने भीतर प्रवेश करके कहा—"मुझे बड़ी प्यास लगी है।"

वैश्य ने अपने एक नौकर को बुलाकर पानी लाने का आदेश दिया। नौकर पानी ले आया, तब योगिनी ने अपने झोले में से एक सोने का लोटा निकालकर उसमें पानी भरवा दिया और पी लिया। वैश्य ने देखा कि सोने के उस लोटे पर हीरे जड़े थे।

योगिनी ने पानी पीकर रत्न जड़े उस लोटे को दूर फेंक दिया।

वैश्य ने चकित होकर पूछा—"रत्न जड़ित उस क़ीमती लोटे को आपने क्यों फेंक दिया?"

योगिनी ने कहा—"मैं इस तरह के लोटे से एक ही बार पानी पीती हूँ। तब उसे फेंक देती हूँ। मेरी प्यास अभी बुझी नहीं, और पानी मंगवा दो।" इस तरह योगिनी ने पाँच-छे बार पानी मंगवाया। हर बार झोले में से एक-एक रत्न खचित लोटा निकाल कर पानी पिया और उन लोटों को दूर फेंकती गयी।

इसे देख वैश्य के आश्चर्य की सीमा न रही। वैश्य की पत्नी का दो-चार साल पहले देहांत हो चुका था। उसने मन में सोचा कि अगर यह उसकी पत्नी बन कर उसके घर में रहने को मान जाय तो क्या ही अच्छा होगा, तब कहा–"देवीजी, आपके वस्त्र पानी में भीगकर तर हो गये हैं; कपड़े बदलकर भोजन कीजिये, तब विश्राम कीजिये। इस विशाल भवन में आपको जो कमरा पसंद आवे, उसी में रह सकती हैं।"

वैश्य के साथ योगिनी ने सारा घर घूमकर देखा और योगी के ठहरनेवाले छोटे कमरे के पास रुककर कहा–"मुझे यही कमरा चाहिए।"

"देवीजी! यह कमरा आपके ठहरने योग्य नहीं है। अलावा इसके इस कमरे में पहले से ही एक योगी रह रहे हैं। इसलिए आप कोई और अच्छा कमरा चुन लीजिये।" वैश्य ने समझाया।

योगिनी ने हठ किया कि उसे वही कमरा चाहिये।

विवश हो वैश्य ने दर्वाज़ा खटखटाकर कहा–"योगीराज! आप कृपया यह कमरा खाली करके दूसरे कमरे में विश्राम कीजिये।"

"मैं इस वक़्त योग की समाधि में हूँ? हिल नहीं सकता। मैं इसी कमरे में रहूँगा।" योगी ने भीतर से ही जवाब दिया।

वैश्य ने योगिनी से प्रार्थना की कि वह कोई दूसरा कमरा ले। मगर उसने नहीं माना। इसलिए वैश्य ने फिर दर्वाज़ा खटखटाकर योगी से बिनती की कि वह दूसरा कमरा ले। पर योगी ने भी न माना। आख़िर वैश्य ने नाराज़ हो अपने नौकरों को बुलाकर दर्वाज़ा तोड़वा दिया और आदेश दिया–"इस हठी योगी को बाहर निकाल दो।"

वैश्य के नौकर ज़बर्दस्ती योगी को बाहर खींचकर ले जाते देख योगिनी ठठाकर हँस पड़ी। इसके बाद उसने कमरे में प्रवेश करते हुए वैश्य से कहा–"हमारे लिए तुम खुद खाना बनाकर ले आओ।" वैश्य रसोई में जाकर खाना बनाने लगा।

वैश्य के जाते ही योगिनी जल्दी-जल्दी बाहर आयी, योगी से मिलकर बोली–"स्वामी, देखते हैं न, क्या हुआ है? आपके भक्त ने क्या किया? क्या आप मानते हैं कि संसार पर मेरा ही अधिकार है।"

विष्णु ने कोई जवाब नहीं दिया।

फिर वे दोनों पैदल चलते आख़िर एक मंदिर के पास पहुँचे। वह विष्णु का मंदिर था। एक राजा ने उसे बनवाया था। उसके आदेशानुसार वह नियत समय पर खोला व बंद किया जाता था।

उस मंदिर को देखते ही विष्णु ने सोचा–"यहाँ पर लक्ष्मी की दाल नहीं गलेगी।" और वे बहुत ख़ुश हुए। क्योंकि उस देश का राजा ही नहीं, बल्कि प्रजा भी विष्णुभक्त थी। अलावा इसके उनमें कोई भी लक्ष्मी की पूजा नहीं करते। इसलिए उन्होंने लक्ष्मी से कहा–"देवीजी, यहाँ पर हम कुछ दिन ठहर जायें तो कैसे होगा?"

"स्वामी, मैं आपकी दासी हूँ। आपकी इच्छा ही मेरी इच्छा है। पर यह मत सोचिये कि यहाँ पर भी आपकी विजय होगी। सब जगह मेरी ही विजय होती है।" लक्ष्मी ने उत्तर दिया।

दोनों ने उस मंदिर में प्रवेश करके विश्राम किया।

दूसरे दिन प्रात:काल चार बजे पुजारी ने प्रवेश करके पूजा शुरू की। भक्त लोग भगवान के दर्शन के लिए आने लगे। सब ने विष्णु के स्तोत्र किये। एक ने भी लक्ष्मी का स्मरण नहीं किया। विष्णु का हृदय आनंद से फूल उठा।

ठीक दुपहर के समय राजा के आदेशानुसार पूजारी ने मंदिर बंद किया।

"देवीजी, तुमने देखा? एक भक्त ने भी तुम्हारा स्मरण नहीं किया। स्वीकार करोगी न कि संसार पर मेरा ही पूरा अधिकार है।" विष्णु ने लक्ष्मी से पूछा।

लक्ष्मी ने मुस्कुराते हुए कहा—"इतनी देर तक अपने भक्तों को दर्शन देकर शायद आप थक गये होंगे। थोड़ी देर विश्राम कीजिये।"

अचानक उस वक़्त राजा के मन में पूजारी की परीक्षा लेने का विचार आया। वह एक व्यापारी का वेष धरकर मंदिर के पास आया और पुजारी से बोला—"पुजारीजी, मुझे भगवान के दर्शन करा दो।"

"महाशय, हमारे राजा का आदेश है कि मंदिर के द्वार बारह बजे के बाद खोलने नहीं चाहिए। अब आप शाम को

ही भगवान के दर्शन कर सकते हैं।" पुजारी ने व्यापारी से कहा।

"पुजारीजी, यह कौन गलत बात है? मुझे भगवान के दर्शन करा दो। मैं दूसरे देश से आया हुआ हूँ। भगवान के दर्शन कर एक हज़ार रुपये भेंट देने आया हूँ। मुझे तुरंत अपने गाँव जाना है। मुझे दर्शन दिला देते तो मैं कृतार्थ हुआ होता। भगवान को भेंट देने का पुण्य भी मुझे मिल जाता। न मालूम, मैं कब इस नगर में आऊँगा।" ये शब्द कहते व्यापारी जाने को हुआ।

पुजारी को लगा कि हाथ में आयी हुई लक्ष्मी का तिरस्कार क्यों करें? उस

व्यापारी को भगवान के दर्शन करा दे तो उसका कौन नुक़सान होगा? राजा को यह बात मालूम हो जाय तब न?

यह सोचकर पुजारी ने जानेवाले व्यापारी से कहा–"महाशय, ठहर जाइये। आप निराश होकर न जावें, भगवान के दर्शन करके प्रसाद लेकर तब जाइये।"

व्यापारी ने भगवान के लिए दो हज़ार रुपये भेंट किये। भगवान के दर्शन करके प्रसाद लेकर वह चला गया। राजभवन में पहुँचते ही राजा ने पुजारी को बुला भेजा और पूछा–"पुजारीजी, मंदिर में पूजा का क्रम ठीक से चल रहा है न?"

"जी हाँ, महाराज।" पुजारी ने जवाब दिया।

"समय पर मंदिर के द्वार खोले और बंद किये जा रहे हैं न? यदि कोई धनी आवे तो निर्णीत समय के बाद दर्वाज़े खोल नहीं रहे हो न?" राजा ने पूछा।

पुजारी को संदेह हुआ कि किसी ने उसके रहस्य को राजा के सामने प्रकट किया है। इसलिए उसने बड़ी चालाकी से उत्तर दिया–"महाराज, मंदिर के द्वार समय पर ही बन्द करता हूँ और खोलता भी हूँ। यदि आप अपने कक्ष में सो रहे हैं और महारानी पधारेंगी तो आपको दर्वाज़े खोलने पड़ते हैं न! ऐसे ही विष्णु के मंदिर में लक्ष्मी प्रवेश करना चाहें तो द्वार खोलने पड़ते हैं।"

पुजारी की चालाकी पर खुश होकर राजा ने दो हज़ार रुपये और देकर पुजारी को भेज दिया।

इस तरह विष्णु भगवान फिर हार गये। लक्ष्मीदेवी ने विष्णु से कहा–"स्वामी, आप मेरे वास्तविक रूप को समझ न पाये। सृष्टि के प्रारंभ से ही मेरी प्रधानता है। जो भी दिखाई देता है, वह मेरा ही रूप है। पुरुष में जो भी शक्ति होती है, वह नारी की है, आप में जो शक्ति है, वह सारी मेरी है। त्रिमूर्तियों का आधार मैं ही हूँ। इसलिए आप मुझे पराजित नहीं कर सकते।"

शिलारथ

[१०]

[भैरवों के हाथों में पड़कर बलि होने के लिए तैयार जीवदत्त तथा भवानी को खड्गवर्मा ने ग्रामवासियों की मदद से बचाया, भैरव जंगल में भाग गये। गाँववालों से विदा लेकर जीवदत्त और खड्गवर्मा पहाड़ से उतर कर घाटी में गये। वहाँ पर एक व्यक्ति एक पेड़ का पहरा दे रहा था। खड्गवर्मा और जीवदत्त ने उसे घेर लिया। बाद—]

खड्गवर्मा ने तलवार उठाकर पहरेदार की छाती पर निशाना लगाया और उसकी आँखों में ध्यान से देखता रह गया। जीवदत्त भी दण्ड उठाकर तैयार हो गया। उसने पहरेदार को चकित देख पूछा—"क्यों डरते हो? ऐसे डरपोक तुम्हारे लिए इस तेज परशु की क्या जरूरत है?"

ये बातें सुनने पर उस युवक का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। दांत मींचते हुए इधर-उधर सर घुमाया, खड्गवर्मा और जीवदत्त की ओर दृष्टि दौड़ाकर कहा—"तुम दोनों ने छिप कर धोखे से मुझ पर हमला किया; फिर भी मैं नहीं डरता। मैं यही सोचता रहा कि तुम दोनों में से किसको पहले यमलोक भेज दूं?"

"अरे, बकवास बंद करके यह बता दो कि तुम बीच जंगल के इस पेड़ का पहरा क्यों दे रहे हो?" ये शब्द कहते

तुम्हारा बहनोई कौन है? पेड़ बुर्ज कैसे बन सकता है?"

"फिलहाल तुम्हारी जीत हो गयी! मगर बुर्ज के रहस्य को जानने पर तुम्हारा कोई फ़ायदा न होगा, बल्कि तुम्हारी हानि होगी। इधर कुछ दिन पहले मैंने यह रहस्य एक आदमी को बताया, पर वह बहनोई के पालतू सिंह और बाघों का शिकार हो गया है।" पहरेदार ने समझाया।

"अरे, यह बात तो और विचित्र मालूम होती है। हमें तो यह रहस्य जानना ही होगा। जल्दी बताओ, अंधेरा फैलने के पहले हमें पहाड़ उतर कर जाना है।" जीवदत्त ने कहा।

"मैं वह रहस्य बता दूँ तो इन दोनों पहाड़ों के बीच तुम दोनों की बुरी मौत हो जायगी।" पहरेदार ने जवाब दिया।

खड्गवर्मा ने क्रोध से परशु उठाकर ललकारा—"सर काट दूँ या रहस्य बता दोगे?"

पहरेदार डर गया और जान बचाने के ख्याल से बोला—"तब तो सुनो। तुम लोग इस पेड़ के तने पर पांच-छे फुट चढ़कर जाओगे तो तुम्हें एक खोखला दिखाई देगा। उस खोखले में थोड़ी दूर तक रेंगते जाओगे तो एक सुरंग दिखाई देगा। उस

खड्गवर्मा झट आगे बढ़ा, और तलवार चमका दी।

खड्गवर्मा की चाल चल निकली। पहरेदार परशु उठाये उस पर कूदने को हुआ, मौक़ा पाकर जीवदत्त ने अपने दण्ड को उसके घुटनों पर टिका कर झटका दिया, जिससे वह गिर पड़ा। उसके हाथ का परशु दूर जा गिरा।

खड्गवर्मा ने हँसते हुए परशु उठाया, कंधे पर रखते हुए बोला—"हमारे इस युद्ध में किसी की कोई हानि नहीं हुई। अगर तुम में उत्साह हो तो उठकर खड़े हो जाओ, वरना पेड़ के तने से सटकर बैठ जाओ। असली बात बता दो कि

सुरंग से होकर चलोगे तो उस पार के पहाड़ तक आधे घंटे में पहुँच सकते हो! मगर रास्ते में तुम्हें मेरे बहनोई का टीला पड़ेगा जहाँ पर तुम्हारी मौत निश्चित है।"

जीवदत्त पल भर सोचता रहा। पहरेदार की बातों को समझने का प्रयत्न करते हुए बोला–"इसका मतलब है कि तुम अपने बहनोई के दुर्ग में किसी को प्रवेश करने से रोकने के लिए यहाँ पर पहरा दे रहे हो? तुम्हारी बातों से यही मालूम होता है कि उस पहाड़ तक पहुँचने के लिए यही निकट का रास्ता है। इसलिए हम इसी मार्ग से जायेंगे। यदि हमको तुम्हारे बहनोई ने रोका तो हम उसका काम तमाम करेंगे।"

"मैं रात को वहाँ लौट कर देखूंगा। बहनोई की आँखों में पड़कर सूरज के डूबने तक तुम दोनों बच रहें तो मैं समझूंगा कि तुम दोनों महान वीर हो।" पहरेदार ने जवाब दिया।

पहरेदार की बातों से उन्हें हँसी आयी, तब वे दोनों पेड़ पर चढ़े। थोड़ी दूर बढ़ने पर उन्हें एक खोखला दिखाई दिया। जीवदत्त उसमें घुस कर रेंगने लगा। खड्गवर्मा ने भी उसमें प्रवेश करते हुए पहरेदार को परशु लौटा दिया और कहा–

"सूरज के डूबने के पहले ही तुमको अपने बहनोई के दुर्ग में पहुँचना उचित होगा। शायद तुम्हारे पहुँचने के पहले उसके टीले वाला क़िला मटियामेट हुआ होगा।"

खड्गवर्मा और जीवदत्त दस मिनट चल कर आगे बढ़े, तो उन्हें एक चट्टान दिखाई दी। उस धुंधले अंधेरे में चट्टान के बीच एक खूंटा दिखाई दिया। उसने दोनों हाथों से खूंटे को खींचा। चट्टान खुल गयी और उन्हें सामने एक सुरंग दिखाई दिया।

"खड्गवर्मा, लगता है कि हम इस सुरंग मार्ग से झुक कर चल सकते हैं। मगर सावधानी से अपने हथियार को ले

मेरे पीछे चलो।" इन शब्दों के साथ जीवदत्त उठ खड़ा हुआ और सुरंग में प्रवेश किया।

सुरंग मार्ग में रोशनी पड़ रही थी, थोड़ी देर में खड्गवर्मा और जीवदत्त सुरंग मार्ग को पार कर उस पार पहुँच गये। सामने उन्हें एक छोटा-सा मैदान दिखाई दिया। कुछ इमारतें और झोंपड़ियाँ भी दिखाई दीं। उनसे सट कर एक ऊँचा टीला था। उस पर पत्थरों से निर्मित एक महल भी दिखाई दिया।

"पहरेदार के बहनोई का टीलेवाला दुर्ग यही होगा! घाटी के बीच निर्मित इस इमारत को देखने से मालूम होता है कि इसमें कोई राक्षस होगा।" जीवदत्त ने कहा।

"हो सकता है कि वह राक्षस ही हो। पर यहाँ तक पहुँच कर हम लौटनेवाले नहीं हैं।" खड़गवर्मा ने कहा।

"यह कैसे संभव होगा? हम सुबह से भूखे हैं। सूरज के डूबने में ज्यादा वक़्त भी नहीं है। आज रात को हमें जबर्दस्ती ही सही, इस टीलेवाले राजा का मेहमान बनना होगा।" जीवदत्त ने हँसते हुए कहा।

इसके बाद वे दोनों सुरंग से बाहर आये। पास में निर्मित एक झोंपड़ी की ओर आगे बढ़े। उनका विचार था कि थोड़ी देर तक झोंपड़ी में आराम करके टीलेवाले महल में चले जायें।

खड़गवर्मा और जीवदत्त झोंपड़ी के क़रीब सौ गज की दूरी तक पहुँच पाये थे कि उन्हें झोंपड़ी की ओर से एक नारी की चिल्लाहट सुनाई दी। इस के बाद उन्हें सिंह का गर्जन सुनाई पड़ा। खड्गवर्मा और जीवदत्त पलभर के लिए चकित हो गये और उस ध्वनि की दिशा में दौड़ने को हुए, तभी एक नारी झोंपड़ी में से चिल्लाती हुई बाहर दौड़ आयी। उसका पीछा करते एक सिंह भी बाहर आया।

जीवदत्त और खड़गवर्मा ललकार करके दौड़ पड़े और उस नारी तथा सिंह के

बीच जा खड़े हुए। वह नारी चिल्लाते हुए टीलेवाले महल की ओर दौड़ते बोली– "सिंह को कोई हानि न पहुँचाइये। मेरे पति आप लोगों को ज़िंदा न छोड़ेंगें।"

नारी की ये बातें सुनकर जीवदत्त और खड्गवर्मा अचरज में आ गये। मगर जीवदत्त को इस पर सोचने का मौक़ा न मिला। सिंह एक बार ज़ोर से गरजकर उस पर कूद पड़ा। पर जीवदत्त झट हट गया और सिंह के हमला करने के पहले ही वह उछलकर उसकी पीठ पर जा बैठा।

सिंह और ज़ोर से गरज उठा और अपनी पिछली टांगों पर खड़े हो जीवदत्त को नीचे गिराने का प्रयत्न करने लगा। अपनी गर्दन घुमाकर जीवदत्त को सिंह ने चबाना चाहा। मगर जीवदत्त अपने को बचाते हुए अपने दण्ड से सिंह के सर और जबड़ों पर प्रहार करने लगा। सिंह उत्तेजित हो चिल्लाते सारे मैदान में दौड़ने लगा।

खड्गवर्मा उत्साह में आकर बोला– "जीव, उसे न मारो। मैं समझता हूँ कि उसे प्रशिक्षिण देने पर हम घोड़े जैसा उसका उपयोग कर सकते हैं।"

नारी दौड़कर टीले पर पहुँची, टीले के मोड़ की ओर संकेत करते बोली–"लो, मेरे पति शिकार से लौट रहे हैं। आप दोनों यहाँ से भाग जाइये; वरना जान से नहीं छोड़ेंगे।"

खड्गवर्मा ने उस दिशा की ओर देखा। सात-आठ फुट लंबे क़दवाला एक विशाल काय व्यक्ति अपने हाथ में पत्थर का एक गदा लिए, एक हिरण तथा एक जंगली सुअर को एक कंधे पर डाल, दूसरे कंधे पर खरगोश और जंगली पक्षियों से भरा जाल डाले उन्हीं की ओर बढ़ा चला आ रहा था। उसके आगे और पीछे चार-पांच सिंह और बाघ चल रहे थे। उनके कंठों में चमड़े की पट्टियाँ पड़ी थीं, जिससे मालूम होता था कि वे जानवर उस महाकाय के द्वारा शिकार में इस्तेमाल किये जानेवाले पालतू जानवर होंगे।

उस महाकाय की दृष्टि पहले सिंह पर बैठे जीवदत्त पर पड़ी। उसके आश्चर्य की सीमा न थी। तभी उसकी दृष्टि तलवार लिये अपने मित्र की ओर बढ़नेवाले खड्गवर्मा पर पड़ी।

तुरंत उस महाकाय ने अपने कंधे पर लटकनेवाले जानवरों को नीचे गिरा दिया। पत्थर के गदे को उठाये खड्गवर्मा और जीवदत्त की ओर लंबे डग भरते आगे बढ़ा। तब वह मेघ गर्जन की भांति गरज कर बोला—"अरे, तुम लोग कौन हो? अल्पायुवाले मालूम होते हो? मेरे पालतू सिंह पर सवारी करते हो?"

"मैंने इस सिंह के हमले से तुम्हारी औरत की जान बचायी, चाहे तो उस से पूछ लो!" इन शब्दों के साथ जीवदत्त ने अपने दण्ड से सिंह के सर पर ज़ोर से दे मारा। तब एक ही छलांग में सिंह पर से नीचे कूद पड़ा।

महाकाय ने अपनी औरत की ओर देखा। वह जल्दी-जल्दी अपने पति के निकट पहुँची और सारी कहानी सुना कर बोली—"इन दोनों को जान से छोड़ दो। ये अपने रास्ते चले जायेंगे।"

"उन्हें कैसे छोड़ दूँ? ये मेरे राज्य में गुप्त रूप से पहुँच गये हैं। पेड़ के पास पहरा देनेवाला तुम्हारा भाई आखिर क्या

करता है?" ये शब्द कहने के बाद महाकाय उन दोनों की ओर ऐसा देखने लगा मानों उसे कोई संदेह हुआ हो, तब बोला—"हाँ, तुम दोनों ने जंगल में एक पेड़ का पहरा देने वाले मेरे साले को मार नहीं डाला है न?"

"नहीं, हमें ऐसी ज़रूरत नहीं पड़ी। उसीने खुद हमें यहाँ तक पहुँचने का रास्ता बताया। हमने उसका परशु भी लौटा दिया।" जीवदत्त ने उत्तर दिया।

"अच्छी बात है। तब तो तुम जिस रास्ते से आये हो, उसी रास्ते से लौट जाओ। फिर कभी इधर आने की हिम्मत न करो। मेरी औरत ने तुम लोगों को माफ़ करने की बिनती की, इसलिए तुमको जान से छोड़ रहा हूँ।" महाकाय ने दांत मींचते हुए कहा।

महाकाय की बातें सुनने पर खड्गवर्मा को बड़ा क्रोध आया। उसने जीवदत्त की ओर देख तलवार उठाकर कहा—"हमें किसी की दया की भीख नहीं चाहिये। तुम बड़े ही घमण्डी मालूम होते हो! तुम को अभी मैं उस तलवार से टुकड़े-टुकड़े कर सकता हूँ।"

खड्गवर्मा की बातें सुनकर क्रोधित हो विशाल काय व्यक्ति गदा उठाकर हुँकार भरते उस पर कूदने को हुआ। मगर

उसकी पत्नी ने उसका हाथ पकड़कर रोकते हुए कहा—"यह तो धर्म युद्ध नहीं कहलायगा। ये दोनों महान वीर मालूम होते हैं। आप दोनों घोड़ों पर सवार हो युद्ध कीजिये। तब जो पराक्रमी है, उसी की जीत होगी।"

अपनी पत्नी की बातें सुनकर महाकाय थोड़ा शांत हुआ। उसने खड्गवर्मा तथा जीवदत्त को संबोधित कर कहा—"मेरी पत्नी का कहना उचित मालूम होता है। आज रात को तुम दोनों मेरे अतिथि बनकर रहो। सूर्योदय के होते ही मैं तुम लोगों को अपने घुड़साल से एक घोड़ा दूंगा। मैं भी एक घोड़ा चुन लूंगा। मेरे

आयुधागार से अपनी पसंद का आयुध ले लो। मगर यह बताओ, कि तुम में से कौन पहले मेरे साथ युद्ध करेगा?"

"पहले और अंतिम बार भी मैं ही तुम से युद्ध करनेवाला हूँ। मुझे केवल एक घोड़ा दे दो। यह दण्ड ही मेरा आयुध होगा। अगर तुम मुझे हराओगे तो मैं समझूंगा कि तुमने मेरे मित्र को भी हरा दिया है।" जीवदत्त ने उत्तर दिया।

"आह! मैं तुम्हारी हिम्मत पर प्रसन्न हूँ। अच्छा, अब मेरे साथ टीले पर चलो।" महाकाय ने कहा।

खड्गवर्मा और जीवदत्त महाकाय के साथ टीलेवाले महल की ओर चल पड़े। महाकाय अपने शिकार किये हुए जानवर तथा पक्षियों को कंधे पर डाल पालतू जानवरों को पशु-शाला में खदेड़ कर थोड़ी ही देर में टीलेवाले महल पर पहुँच गया।

"लो, यही तुम्हारे ठहरने का कमरा है! तुम्हारी रसोई के लिए सारी सामग्री भीतर पड़ी हुई है। थोड़ी देर में इन जानवरों का मांस मेरी पत्नी लाकर तुमको दे देगी।" इन शब्दों के साथ विशाल काय ने खड्गवर्मा और जीवदत्त को एक बहुत बड़ा कमरा दिखाया।

खड्गवर्मा और जीवदत्त उस कमरे में पहुँच कर रसोई का प्रबंध करने लगे। रात के नौ बजे तक खाना खाकर सोने की तैयारी करने लगे। आधी रात के समय उन्हें अपने कमरे के बाहर किसी के क़दमों की आहट सुनाई दी। वे दोनों सोच ही रहे थे कि वह व्यक्ति कौन होगा? तभी उन्हें ये बातें सुनाई दीं—"बहनोई जी, क्या वे दो घमण्डी युवक यहाँ पर आये? उनकी लाशें कहाँ? यदि वे अब भी जीवित हों तो मैं इस परशु से उनकी बलि दूंगा।"

बाहर बोलनेवाला व्यक्ति पहरेदार था। खड्गवर्मा और जीवदत्त ने उसके स्वर को पहचान लिया। खड्गवर्मा तुरंत अपने म्यान से तलवार खींच कर दर्वाज़े की ओर बढ़ा। (और है)

तीन कन्याएँ

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने यों कहा–"राजन, तुम अपनी लगन में सफल हो जाओगे। तुम्हारे जैसे दृढ़ निश्चय के कारण प्राचीनकाल में सिंहकेतु के पुत्र विजय ने अपने कार्य को साधकर राज्य भी प्राप्त कर लिया। श्रम को भुलाने के लिए मैं उसकी कहानी सुनाता हूँ, सुनो!"

बेताल यों कहने लगा: पुराने जमाने में विदेह नामक एक छोटे राज्य पर सिंहकेतु नामक राजा शासन करता था। उसके प्रताप, उल्लास और विजय नामक तीन पुत्र थे। अपने पुत्रों को राजा बहुत चाहता था। तीनों भाई परस्पर अधिक प्यार करते थे।

शासन-कार्यों में सिंहकेतु की कभी अभिरुचि न थी। इसलिए अपने पुत्रों के

वेताल कथाएँ

युवा होते ही उसने अपने बड़े पुत्र प्रताप को बुलाकर समझाया–"बेटा, मैं तुम्हारा राज्याभिषेक करूँगा। तुम इस राज्य का भार अपने कंधों पर ले लो।"

प्रताप ने स्वीकार नहीं किया। उसने कहा–"पिताजी, यदि आप राज्य पर शासन करना नहीं चाहते तो इस राज्य को तीन भागों में बांटकर हम तीनों भाइयों को दे दीजिये। मगर सारा राज्य मुझे न सौंपिये।"

लेकिन राज्य को तीन भागों में बांटने के लिए मंत्री-सेनापति वगैरह ने नहीं माना। उन सबने सभा बुलायी। चर्चा के समय एक वृद्ध ने सलाह दी–"हम तीनों राजकुमारों को तीन मूल्यवान वस्तुओं को लाने के लिए देशाटन पर भेज देंगे। इन तीनों में से जो मूल्यबान वस्तु लायगा, उसी को हम गद्दी पर बिठायेंगे।" यह सलाह सबको पसंद आयी। राजकुमारों ने भी इस निर्णय को माना और वे उसी दिन देशाटन पर चल पड़े। उस दिन रात को राजकुमार एक जंगल में किसी पेड़ के नीचे पत्ते बिछाकर उस रात को बिताने के लिए तैयार हो गये। उस समय वहाँ पर एक साधु आया और बोला–"बेटे, तुम लोगों का यहाँ पर रात बिताना खतरे से खाली नहीं, पास में ही मेरी कुटी है। तुम लोग वहाँ आकर विश्राम करो।"

राजकुमारों ने साधु के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की और उसके साथ कुटी में चले गये। कुटी में हिरण के चमड़े बिछाकर वे आराम से सो गये।

दूसरे दिन सवेरे राजकुमार जाग पड़े। उन्हें कुटी की दीवार पर तीन कन्याओं के चित्र दिखाई दिये। वे कन्याएँ बड़ी सुंदर थीं। मगर उनके वस्त्रों में अंतर था। एक कन्या के वस्त्र सोने के रंग के थे, दूसरी के चाँदी के रंग के और तीसरी कन्या के वस्त्र लोहे के रंग के थे। उन चित्रों को देखते रहने पर तीनों

राजकुमारों के मन में उन कन्याओं के साथ विवाह करने की इच्छा पैदा हुई।

बड़े भाई दोनों अपनी पसंद की कन्याओं के साथ विवाह करने के ख्याल से रवाना होने के लिए तैयार हो गये। मगर तीसरे राजकुमार विजय ने उन्हें समझाया–"जल्दबाजी किसलिए? उन कन्याओं का पता साधु के द्वारा लगावे तो हमारा काम बहुत ही सरल हो जायगा।"

साधु राजकुमारों से पहले ही जागकर जंगल में चला गया था, दुपहर के क़रीब वह अपनी कुटी में लौट आया। राजकुमार साधु के आगमन का भी ख्याल किये बिना उन कन्याओं के चित्रों की ओर एकटक देख रहे थे। इसे देख साधु ने उन्हें समझाया–"तुम लोग उन चित्रों की ओर एकटक क्यों देखते हो? वे कन्याएँ तुमको प्राप्त न होंगी। उनके पास पहुँचना भी खतरे से खाली नहीं।"

"साधु महाराज! उन कन्याओं के वास्ते हम अपने प्राण देने को भी तैयार हैं। कृपया बताइये कि ये कन्याएँ कहाँ पर हैं?" राजकुमारों ने साधु से पूछा।

"तुम लोग चाहे तो उन कन्याओं के पास पहुँच सकते हो, मगर प्राणों के साथ लौट नहीं सकते।" साधु ने कहा। फिर भी राजकुमारों ने अपना निर्णय नहीं बदला।
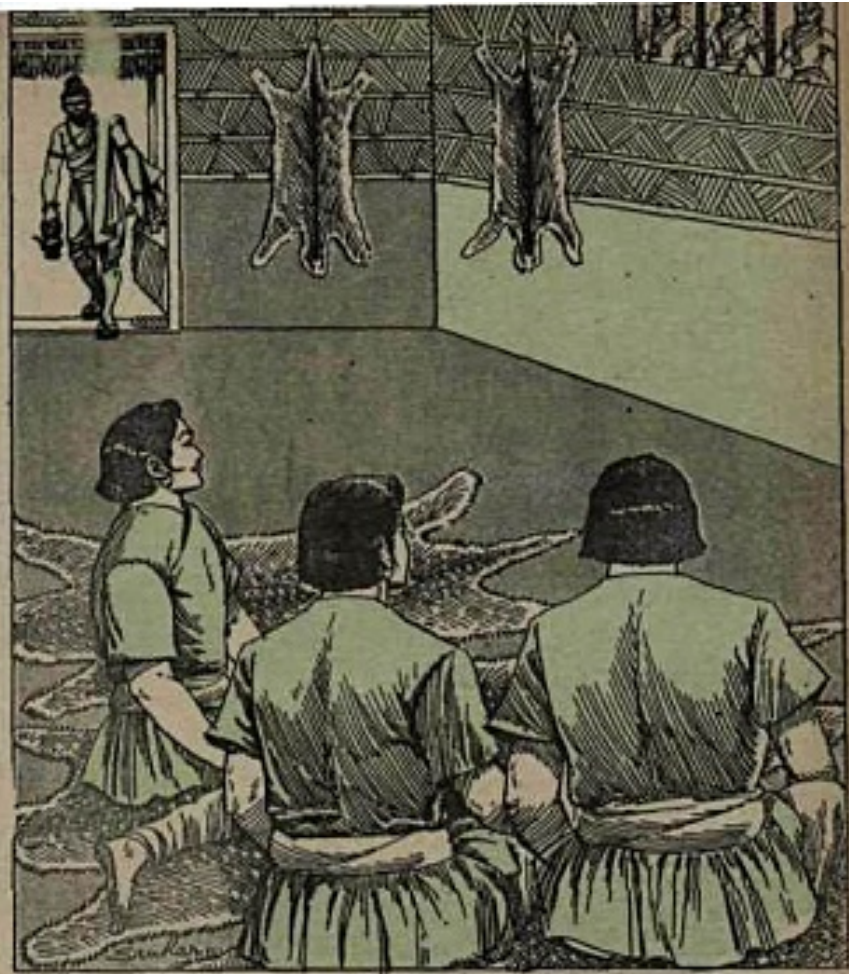
इस पर साधु ने प्रताप को कुटी से बाहर ले जाकर कहा–"बेटा, जिस कन्या ने तुमको अपनी ओर आकृष्ट किया, वह स्वर्ण कन्या है। उसके पास पहुँचने का मार्ग मैं तुमको बता देता हूँ। तुम सीधे यहाँ से पश्चिमी दिशा में जाओ। सूर्यास्त के समय तक तुमको एक झरना दिखाई देगा। उसकी धारा के साथ चलोगे तो तुमको एक पुल दिखाई देगा। वहाँ के एक नुकीले पत्थर को लेकर तुम अपनी हथेली पर घाव करो। तुम्हारे खून की तीन बूँदें झरने की धारा में गिराकर कहो–"स्वर्ण कन्या के पास जानेवाला रास्ता खुल जाय।"

तुरंत ही तुमको सोने की सीढ़ियाँ दिखायी देंगी। उन सीढ़ियों पर चढ़कर जाओगे तो तुमको एक सोने का किवाड़ और उसके बाजू में लकड़ी का किवाड़ दिखाई देंगे। पर तुम पहले लकड़ी का किवाड़ खोलकर भीतर जाओ। भीतर तुमको एक सोने की सुराही दिखाई देगी। उसे अपने हाथ में लेकर बाहर आ जाओ। फिर सोने का किवाड़ खोलकर अंदर जाओ। वहाँ पर तुमको स्वर्ण कन्या दिखाई देगी। उस पर तुम सुराही का जल छिड़का दो। तब तुमको स्वर्ण कन्या के साथ सोना भी प्राप्त होगा। तुम्हारा शुभ होगा!"

साधु के कहे अनुसार प्रताप पश्चिमी दिशा की ओर यात्रा करते सूर्यास्त के समय तक झरने के पास पहुँचा। झरने की धारा के साथ चलकर पुल के पास गया, तब बोला–"स्वर्ण कन्या के पास जानेवाला रास्ता खुल जाय!" मगर उसका असर कुछ न हुआ। तब उसने साधु की बातें याद कीं। एक नुकीले पत्थर से अपनी हथेली को काटा, खून की तीन बूंदें झरने के जल में गिराकर साधु के कहे अनुसार बोला। इस पर उसे सोने की सीढ़ियाँ दिखाई दीं। वह जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर गया तो वहाँ पर उसे सोने व लकड़ी के किवाड़ दिखाई पड़े।

प्रताप के मन में स्वर्ण कन्या को जल्दी देखने की लालसा थी। इसलिए वह साधु की बातें भूल गया। लकड़ी के किवाड़ को छोड़ वह सोने के किवाड़ खोलकर भीतर पहुँचा। स्वर्ण कन्या एक सिंहासन पर बैठी दिखाई दी। उसने राजकुमार को देखते ही कहा–"राजकुमार, क्या तुम मुझे मुक्त करने आये हो? आज कैसा सुदिन है? आओ, मेरी बगल में आ बैठो।" प्रताप शीघ्रता के साथ उसके निकट पहुँचा। मगर उस कन्या ने सोने की छड़ी से राजकुमार का स्पर्श किया। तुरंत वह सोने की मूर्ति में बदल गया।

इधर जंगल में साधु सात दिन तक प्रताप का इंतजार करता रहा, आखिर वह निराश हो गया। प्रताप के छोटे भाई भी अपनी पसंद की कन्याओं के पास जाने के लिए जल्दी मचाने लगे। तब साधु ने उन्हें समझाया-"तुम दोनों मत जाओ। प्रताप मर गया है।"

मगर उल्लास ने जाने का हठ किया। साधु ने उसे कुटी के बाहर ले जाकर रजत कन्या के पास पहुँचने का मार्ग यों बताया-

"बेटा, तुम सीधे दक्षिणी दिशा में जाओ! दुपहर तक तुमको एक पहाड़ दिखाई देगा। उस पहाड़ के नीचे एक शमी वृक्ष होगा। उस पर एक चांदी की छड़ी लटकती दिखाई देगी। उस छड़ी से तुम जमीन पर मारोगे तो एक रास्ता खुल जायगा। उस मार्ग से तुम आगे बढ़ोगे तो एक रजत कुटी, और झाड़ी दिखाई देगी। उस झाड़ी पर चांदी के एक पिंजड़े में चांदी की चिड़िया होगी। तुम पहले चांदी की चिड़िया को लेकर चांदी की कुटी में जाओ। वहाँ पर तुमको रजत कन्या सिंहासन पर बैठी दिखाई देगी। तुम चांदी की चिड़िया का एक पर निकाल कर रजत कन्या पर फेंक दो। तब उसकी सारी शक्तियाँ जाती रहेंगी और वह तुम्हारे अधीन हो जायगी, साथ ही सारी चांदी तुमको प्राप्त हो जायगी।"

उल्लास साधु का आशीर्वाद पाकर चल पड़ा। दुपहर तक वह शमी वृक्ष के

एक सप्ताह और बीत गया। फिर भी मुनि के पास उल्लास लौट कर न आया। विजय भी अपनी पसंद की कन्या के पास जाने को मचलने लगा। साधु ने उसको समझाया–"बेटा, तुम्हारे दोनों बड़े भाई मर गये। तुम भी क्यों हारना चाहते हो, वापस लौट जाओ।"

"साधु महाराज! मेरा नाम विजय है! मैं कभी पराजय नहीं पाऊँगा।" विजय ने उत्तर दिया।

"यदि तुम जाना ही चाहते हो तो उत्तरी दिशा में जाओ। सूर्योदय के होते होते तुम एक खाई तक जाओगे। वहाँ पर तुमको एक इस्फात की कुटी और एक झोंपड़ी भी दिखाई देंगी। तुम पहले झोंपड़ी में जाओ, वहाँ पर तुम्हें इस्फात की बनी एक तलवार दिखाई देगी। उसे लेकर तुम इस्फात की कुटी में जाओ। वहाँ तुम्हारी पसंद की हुई कन्या मिलेगी। उसको देखते ही तुम उसके हाथ की तलवार को उड़ा दो। तब वह तुम्हारे वश में हो जायगी और इस्फात भी तुमको प्राप्त हो जायगा। विजयी होकर लौट आओ, बेटा!" साधु ने समझाया।

विजय उत्तरी दिशा में रवाना होकर सूर्योदय के समय तक एक गहरी खाई तक पहुँचा। वहीं पर उसे एक इस्फात की

निकट पहुँचा। उसने शमी वृक्ष पर लटकने वाली चांदी की छड़ी लेकर जमीन पर दे मारा। तुरंत वहाँ पर एक सुरंग दिखाई दिया। उससे होकर वह रजत कुटी के पास पहुँचा। मगर चांदी की झाड़ी, पिंजड़ा और चिड़िया को देखे बिना वह रजत कुटी के भीतर चला गया। वहाँ पर उसे रजत कन्या सिंहासन पर बैठी दिखाई दी। उसने उल्लास को प्यार से निकट आने को बुलाया। मगर ज्यों ही उल्लास रजत कन्या के पास पहुँचा, त्यों ही उसने चांदी की छड़ी से उसका स्पर्श करके उसको मूर्ति में बदल दिया।

कुटी और एक झोंपड़ी दिखाई दी। विजय ने पहले झोंपड़ी में प्रवेश किया, वहाँ से इस्फाती तलवार को लेकर तब इस्फात की कुटी में गया। वहाँ एक सिंहासन पर इस्फाती कन्या बैठी हुई थी। उसने प्यार से विजय को पास बुलाया।

विजय ने उस कन्या के पास पहुँचते ही अपनी इस्फाती तलवार से उसके हाथ की तलवार को काट डाला। तुरंत ही उस कन्या के चारों तरफ़ फैली हुयी माया गायब हो गयी। इस्फाती कन्या ने विजय को अपने पति के रूप में स्वीकार किया।

इस्फाती कन्या जानती थी कि स्वर्ण कन्या और रजत कन्या कहाँ पर हैं। वे दोनों उसकी बहनें थीं। तीनों शाप के शिकार हो चुकी थीं। इस्फाती कन्या की मदद से विजय उन प्रदेशों में गया और स्वर्ण कन्या और रजंत कन्या को शाप से मुक्त कराया तथा अपने भाइयों को जिलाया। इसके बाद तीनों राजकुमार अपनी पत्नियों के साथ साधु की कुटी में आये। उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट की, विदा लेकर अपने देश को लौट आये।

राजकुमारों द्वारा लायी गयी कन्याओं के अनुपम सौंदर्य को देख सब लोग आश्चर्य चकित हो गये। राजा ने बड़े वैभव के साथ उनका विवाह किया और राजकुमार के राजा बनने की योग्यता का निर्णय करने के लिए सभा बुलायी।

राजा ने बुजुर्गों से बताया—"मेरे पुत्रों ने देशाटन करके अपनी अपनी शक्ति के अनुरूप वस्तुओं को प्राप्त किया है। प्रताप ने सोना प्राप्त किया तो उल्लास ने चांदी और विजय ने इस्फात को। आप लोग निर्णय कीजिये कि इनमें किसको सिंहासन पर बिठाया जाय।"

राज सभा में थोड़ी देर तक चर्चा चलती रही। तब एक वृद्ध ने उठकर कहा—"महाराज, विजय को गद्दी पर

बिठाइये।" राजा ने विजय को सिंहासन पर बिठाया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, अमूल्य स्वर्ण और रजत लानेवाले प्रताप और उल्लास को छोड़ वृद्ध ने विजय को सिंहासन पर बिठाने की क्यों सिफारिश की? जहाँ उसके भाई असफल हुए, वहाँ पर वह सफल हुआ, क्या इसलिए? अथवा सचमुच उसमें राजा बनने की योग्यता है? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा–"यह प्रतीत नहीं होता कि बुजुर्गों ने इस बात पर चर्चा की हो कि विजय अपने भाइयों को मुक्त कराने में सहायक हुआ है। चर्चा तो इसी बात पर चली कि किसने क्या प्राप्त किया है? राजकुमारों के सामने यह शर्त रखी गयी थी कि कौन कैसी मूल्य की वस्तु प्राप्त कर लौट सकता है? बड़े राजकुमार ने सोना, दूसरे ने चान्दी प्राप्त की। ये दोनों चीजें मूल्यवान ज़रूर हैं, मगर उनका उपयोग देश के लिए अलबत्ता कम है। उनके साथ तुलना करे तो इस्फात का मूल्य कहीं अधिक है। खेती के समस्त उपकरणों के लिए इस्फात की ज़रूरत होती है। देश की रक्षा के लिए हथियार तैयार करना है तो इस्फात की आवश्यकता है। चांदी और सोना व्यक्तियों का मूल्य अवश्य बढ़ा सकते हैं, किंतु देश और राज्य का मूल्य इस्फात पर ही निर्भर है। इसीलिए विजय राजगद्दी के योग्य माना गया है। अपने बड़े भाइयों के साथ भी विजय की तुलना की जाय तो भी विजय राज्य पाने के हक़दार हैं। उसके भाइयों ने अपनी पसंद की कन्याओं के मोह में पड़कर साधु की बातों की अवहेलना की और जल्दीबाजी में आकर वे पराजित हुए।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
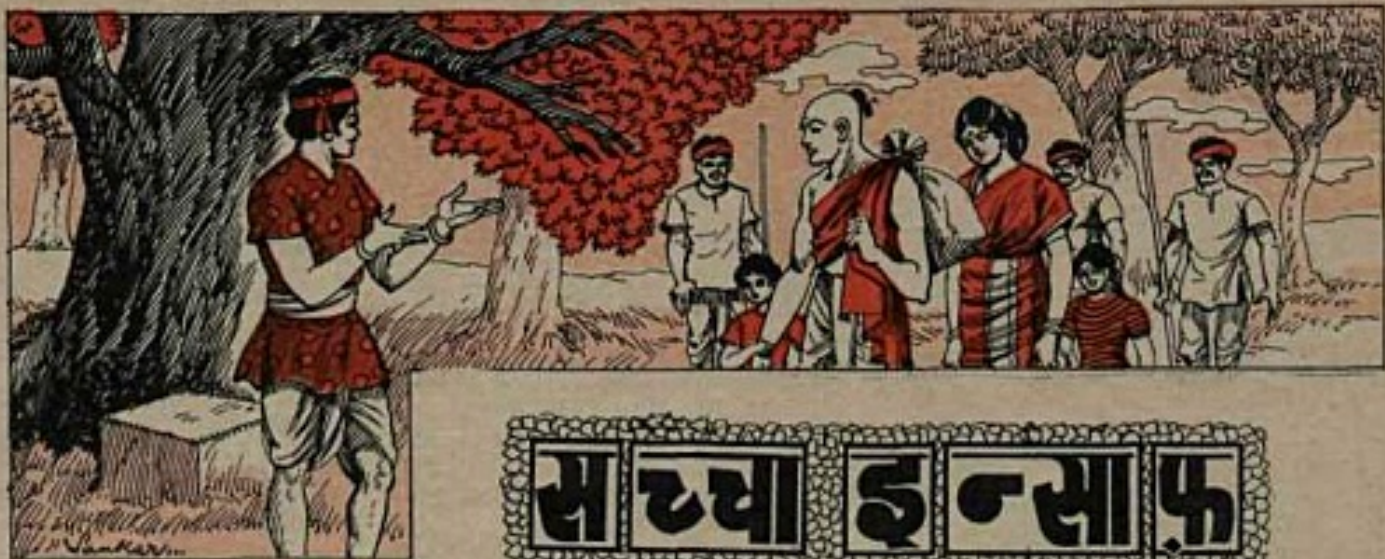
सच्चा इन्साफ़

पुराने जमाने में एक राज्य में एक गोकुल था। उसमें चरवाहे रहा करते थे। गोकुल में वीरदास नामक एक युवक था। गोकुल के सभी युवक वीरदास के शासन को मानते थे। वीरदास को वे लोग 'वीरराजा' कहकर पुकारते थे। 'छोटा राजा' उसकी एक उपाधि थी।

एक दिन वे युवक मवेशी चरा रहे थे। उस वक़्त वीरदास ने देखा कि दूर पर एक ब्राह्मण अपनी पत्नी और बच्चों के साथ कहीं जा रहा है। तुरंत वीरदास ने अपने साथियों को आदेश दिया—"जाओ, तुम लोग उनको बुला लाओ। यहाँ पर पेड़ों की छाया में थोड़ी देर विश्राम करके अपने रास्ते चले जायेंगे।"

युवकों ने उस ब्राह्मण के पास जाकर कहा—"आप लोग थोड़ी देर तक पेड़ों की छाया में आराम करके तब जाइये।"

ब्राह्मण ने कहा—"हमें न आराम चाहिए और न कुछ। अपने रास्ते जाने दो।" यह जवाब देकर आगे बढ़ने लगा।

मगर उन युवकों ने ब्राह्मण को रोकते हुए कहा—"आप लोग नहीं जा सकते। हमारे वीरराजा की आज्ञा है।"

ब्राह्मण लाचार हो अपनी पत्नी और बच्चों को साथ ले वीरदास के पास आ पहुँचा। वीरदास एक शिला पर बैठा था। ब्राह्मण परिवार को निकट आते ही वीरदास झट उठ खड़ा हुआ। उन्हें प्रणाम किया। सबको बिठाकर बोला—"महाशय, लगता है कि आप दूर देश की यात्रा पर जा रहे हैं। आपके चेहरों को देखने पर मालूम होता कि आप किसी मुसीबत में फँसे हैं। हमसे कोई मदद चाहे तो बिना संकोच के कहिये। हमसे जो कुछ होगा, जरूर करेंगे।"

सुरेन्द्र तिवारी

सुरक्षित रखा। पर कुछ साल बाद मुझे अपनी पुत्री का विवाह करना पड़ा। विवाह के खर्च के निमित्त मुझे धन की जरूरत पड़ी। धन पाने का और कोई उपाय न देख मैंने उस मणि को एक व्यापारी के यहाँ गिरवी रखा और एक हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ उधार में लाया। मेरी पुत्री का विवाह तो हो गया। एक साल बाद मैंने एक हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ ब्याज सहित ले जाकर व्यापारी को सौंप दिया और अपना मणि वापस माँगा।

व्यापारी ने अपना धन गिनकर देखा और उसे तिजोरी में बंद करके बताया– "आपका मणि मेरी पत्नी की पेटी में है। वह अपने मायके गयी हुई है। उसके लौटते ही मैं आपका मणि वापस कर दूँगा।" इसके बाद मैं कई बार व्यापारी के घर गया, उसने बार-बार कोई न कोई बहाना करके मुझे खाली हाथ घर लौटाया। आखिर व्यापारी ने मुझ से कहा–"आप यह क्या माँग रहे हैं? जब आपने मेरा धन वापस किया तभी मैंने आपको वह मणि लौटा दिया था। फिर माँगते हो तो मैं कहाँ से लाऊँगा?" इस अन्याय को देख मैं ज़ोर से चिल्ला पड़ा। व्यापारी ने अपने नौकरों द्वारा

ब्राह्मण ने वीरदास से कहा–"तुम्हारा सोचना बिलकुल सही है। इस राज्य में न्याय और धर्म नष्ट हो गये हैं। इसलिए यहाँ की हमारी सारी संपत्ति को छोड़ हम देशाटन पर जा रहे हैं।"

इसके बाद ब्राह्मण ने अपनी कहानी सुनायी–"मैं एक पंडित हूँ। मुझे जो थोड़ी-बहुत आमदनी होती है, उसी से अपना गुज़ारा करता था। एक बार मेरे पांडित्य पर प्रसन्न हो एक अमीर ने मुझे नीलमणि पुरस्कार में दिया। मगर मैंने उस मणि को नहीं बेचा, बल्कि अपने पांडित्य के चिह्न के रूप में शाश्वत रूप से अपने परिवार में रखने के ख्याल से

मुझे घर से बाहर निकलवा दिया। मैंने सीधे राजा के पास जाकर फ़रियाद की। व्यापारी ने घूस देकर दो गवाही ठीक किये। उन गवाहों ने राजा के सामने गवाही देते हुए यही बताया कि मुझे अपना ऋण चुकाकर अपना मणि वापस ले जाते हुए उन दोनों ने अपनी आँखों से देखा है।

राजा ने मेरी फ़रियाद न केवल खारिज की, बल्कि मुझे समझाया कि प्रतिष्ठित व्यापारियों पर इलजाम लगाना उचित नहीं है, बल्कि अपराध है। फिर भी मैं एक अच्छा पंडित हूँ, इस नाते मुझे सजा दिये बिना माफ़ कर रहे हैं।

इस तरह इस राज्य में मेरे प्रति न्याय नहीं हुआ, बल्कि मेरा अपमान भी हुआ। इसीलिए मैं अपने घर-द्वार व गाँव छोड़कर देशाटन पर जा रहा हूँ।

ब्राह्मण की कहानी सुनकर वीरदास ने कहा—"पंडितजी, मैं देखूँगा कि इस राज्य में आपके प्रति न्याय हो। आप कृपया यहीं रह जाइये। मैं आपके ठहरने का सारा इंतजाम करूँगा।" इसके बाद वीरदास ने अपने साथियों को हमारे ठहरने का इंतजाम करने के लिए नियुक्त किया।

वीरदास का आदेश पाकर युवकों ने एक झोंपड़ी बनायी और ब्राह्मण परिवार

के लिए आवश्यक चावल, दाल, नमक, तरकारी आदि लाकर रख दिये। ब्राह्मण वीरदास के अनुरोध पर सपरिवार वहीं रह गया। दूसरे दिन वीरदास ने राजा के नाम एक युवक के द्वारा इस प्रकार संदेशा भेजा—"महाराजा ने एक ब्राह्मण और एक व्यापारी के बीच के नीलमणि के विवाद का जो फ़ैसला किया, वह सही नहीं है। इस वजह से महाराज की बदनामी होगी। अगर महाराज अनुमति दे तो मैं स्वयं फैसला करके सही इन्साफ़ करूँगा।"

यह संदेशा पढ़कर राजा पहले चकित हुआ। बाद को उसके मन में कुतूहल पैदा हुआ। इसलिए राजा ने वीरदास के

द्वारा फ़ैसला करने की अनुमति दे दी। वीरदास ब्राह्मण को साथ लेकर राजमहल में आया। उसने पहले राजा को सूचित किया कि वह किस तरह फ़ैसला करनेवाला है। इसका उचित इंतज़ाम भी करवाया।

राजमहल में जब यह मालूम हुआ कि एक चारावाह आकर राजा की सभा में इन्साफ़ करके फ़ैसला सुनाने वाला है, तब रानी तथा अंत:पुर की परिचारिकाएँ आकर बगल के कमरों में बैठ गयीं। व्यापारी तथा उसके दो गवाह और ब्राह्मण को अलग-अलग स्थानों में रखा गया। सभासदों से राजसभा भर गयी। वीरदास राजा के चरणों के पास जा बैठा।

पहले ब्राह्मण ने प्रवेश करके अपनी सारी कहानी सभासदों को सुनायी। वीरदास के द्वारा दिखाये गये कंकड़ों को देख ब्राह्मण ने बताया कि उसका नीलमणि किस कंकड़ के परिमाण में है। वहाँ पर रखे गये तरह-तरह के नीले रंग के वस्त्रों के टुकड़ों में से किस रंग में उसका मणि है, यह भी दिखाया। इसके बाद व्यापारी ने प्रवेश करके उसके पास गिरवी रखे गये मणि के परिमाण का परिचय ब्राह्मण के दिखाये मुताबिक़ दिया।

उन दोनों के कथनों में अंतर यही था कि ब्राह्मण ने बताया था कि उसने जो नीलमणि गिरवी रखा, वह उसे वापस नहीं मिला और जब उसने अपना मणि गिरवी रखा और उसका मूल्य चुकाया तब व्यापारी के पास कोई न था। मगर व्यापारी ने बताया कि जब उसने वह मणि ब्राह्मण को लौटा दिया तब वहाँ पर दो व्यक्ति और थे।

प्रथम गवाह को बुलवाकर वीरदास ने प्रश्न किया। उसने बताया कि वह जब व्यापारी के पास पाँच सौ स्वर्ण मुद्राओं को उधार लेने गया तब ब्राह्मण ने जो धन लौटाया, उसी में से व्यापारी ने उसे पाँच सौ मुद्राएँ दीं। उसने यह भी बताया कि जब वह व्यापारी के पास गया था तब

दूसरा गवाह वहाँ पर न था बल्कि वह बाद को आया। साथ ही यह भी कहा कि व्यापारी ने नीलमणि को पीले वस्त्र में बांधकर ब्राह्मण के हाथ दिया तो ब्राह्मण ने उसे अपनी कमर की धोती में छिपा लिया। मगर वह गवाह ठीक से यह बता न पाया कि मणि किस परिमाण में है और उसका रंग क्या है!

इसके उपरांत वीरदास ने दूसरे गवाह को बुला कर सवाल किया। दूसरे गवाह ने जो गवाही दी, उसके साथ पहले गवाह की गवाही में मेल न बैठी।

वीरदास ने गवाहों को भेजकर महाराजा से कहा–"महाराज, ये दोनों झूठे गवाह हैं। आप इस बात का पता लगायेंगे कि व्यापारी झूठे गवाहों को क्यों बुला लाया है, तब सही इन्साफ़ होगा। यदि व्यापारी सच न बतावे तो उसकी पत्नी को बुलवा कर आप पूछ सकते हैं कि वह अपने मायके गयी कि नहीं। अगर गयी थी तो कब गयी, कब लौट आयी। नीलमणि उसकी पेटी में रखा गया था या नहीं। व्यापारी के घर की तलाशी ले सकते हैं।"

राजा को मालूम हुआ कि फ़ैसला कितनी बारीकी के साथ किया जा सकता है। राजा ने व्यापारी के गवाहों को बुलाकर धमकी दी कि झूठ बोलने के अपराध में उनके सर कटवा दिये जायेंगे, इस पर वे दोनों घबरा कर राजा के पैरों पर गिर पड़े और बोले कि वास्तव में वे दोनों यह सारा मामला कुछ नहीं जानते। व्यापारी ने झूठी गवाही देने के लिए उन्हें हर एक को पाँच-पाँच स्वर्ण मुद्राएँ देने की लालच दिखायी, इसलिए पाँच मुद्राएँ लेकर झूठी गवाही दी है।

अपने गवाहों के द्वारा असलियत खोल देने पर व्यापारी को अपना अपराध स्वीकार करना पड़ा। व्यापारी ने राजभटों के साथ अपने घर जाकर नीलमणि तथा जुलमाने की रक़म लाकर ब्राह्मण को दे दिया। इसके बाद राजा ने

व्यापारी तथा उसके गवाहों को कारागार की सज़ा दी।

राजा ने वीरदास की युक्ति की बड़ी प्रशंसा की। तब ब्राह्मण ने वीरदास का हाथ देखकर कहा—"मैं थोड़ा बहुत ज्योतिष शास्त्र और सामुद्रिक शास्त्र का ज्ञान रखता हूँ। इस युवक के हाथ में राजा बनने के लक्षण हैं। मेरा संदेह है कि राज्य भ्रष्ट हो अज्ञात रूप में रहनेवाले राजदंपति ही इस युवक के माता-पिता होंगे।" बगल के कमरे में बैठी रानी ये बातें सुनकर बेहोश हो गयी। जब वह होश में आयी तब राजा ने रानी से पूछा—"तुम बेहोश कैसे हो गयी?" रानी ने राजा से अभय पाकर अपना रहस्य यों प्रकट किया।

आप श्याम वर्ण के हैं और मैं गोरी हूँ। मैं जब गर्भवती थी, तब राजमाता ने आप से कहा था—"तुम्हारा होनेवाला पुत्र भी यदि श्याम वर्ण का हो तो तुम दूसरा विवाह करो।"

यह बात मेरे कानों में पड़ी। मैंने सोचा कि यदि मेरे गर्भ से श्याम वर्ण का लड़का पैदा हो जायगा तो मेरा भविष्य अंधकारमय हो जायगा। ऐसा हो जाय तो उस लड़के को बदलने के लिए मैंने अपनी परिचारिका के द्वारा पहले ही इंतज़ाम कर रखा था। मेरे प्रसव के समय ही गोकुल में एक औरत ने गोरे लड़के का जन्म दिया था। दुर्भाग्य से मेरे गर्भ से श्याम वर्ण का लड़का पैदा हुआ। परिचारिका ने बड़ी खूबी के साथ इन बच्चों की अदला-बदली की। इस तरह बदल कर गोकुल में बढ़नेवाला लड़का ही वीरदास है।

रानी ने जो कहानी सुनायी, वह बड़ी आसानी से सच्ची साबित हुई। राजा ने जिसे अपना पुत्र समझ कर पाला-पोसा, वह मंद बुद्धिवाला निकला। इस पर राजा ने वीरदास को खुशी के साथ स्वीकार किया और प्रकट रूप में यह घोषणा की कि वीरदास उसी का पुत्र है।

अक्षय संपत्ति

[२]

अबू अल कासिम खलीफ़ा का हाथ पकड़कर एक शीतल कक्ष में ले गया और उसे एक सोने के आसन पर बिठाया। उस कक्ष में गुग्गुल जल रहा था और सुगंधी धूप से कमरा महक रहा था। फ़र्श पर फूलों की भांति कालीन बिछा गया था। अबू अल कासिम खलीफ़ा के बाजू में बैठकर अपनी कहानी यों सुनाने लगा:

मेरा बाप अब्दुल अजीब कैरो नगर का मशहूर जौहरी था। वह इतना धन कमा चुका था कि ईजिफ़्ट के सुलतान को उस पर ईर्ष्या होने लगी। इससे डरकर मेरा बाप बस्त्रा नगर के अब्बासिद खलीफ़ा की शरण में गया।

मेरे बाप ने बस्त्रा नगर के सबसे बड़े धनी व्यापारी की बेटी के साथ शादी की। मेरी मां इकलौती बेटी थी। मेरे बचपन में ही मेरे मां-बाप मर गये। इसलिए मैं बड़ी संपत्ति का वारिस बना।

मगर मैंने अपनी सारी जायदाद अंधा-धुंध खर्च की और दो साल के भीतर अपनी सारी जायदाद उड़ा दी। मेरा नाम तो चारों तरफ़ मशहूर हो गया था, इसलिए वहीं पर एक गरीब की ज़िंदगी जीने के बदले बस्त्रा छोड़कर जाना मुनासिब समझा। मैं अपने घर-द्वार बेचकर व्यापारियों के साथ चल पड़ा। मोसुल, दमस्कस वगैरह शहरों को देखा। वहाँ से रेगिस्तान पार करके मक्के की यात्रा की, तब अपने दादा-परदादाओं के जन्मस्थान कैरो नगर में पहुँचा।

कैरो नगर के महल और मसजिदों को देखते ही मुझे अपने बाप की याद हो

प्रमीला कुमारी

आयी और मैं रो पड़ा। मेरे बाप ने इस नगर में कैसी शान के साथ अपनी ज़िंदगी बितायी। मैं अपने भारी दिल को लेकर सुलतान के महल के पीछे बहनेवाली नील नदी के किनारे पर गया। मैंने सर उठाकर देखा तो ऊपर के एक गवाक्ष में से एक युवती का चेहरा दिखायी दिया और तुरंत गायब हो गया। उस सुंदर चेहरे को फिर देखने के ख्याल से मैं शाम तक वहीं बैठा रहा, मगर वह चेहरा फिर मुझे दिखाई न दिया।

उस दिन रात को मैं अपने बसेरे सराय में गया। दूसरे दिन सवेरे फिर वहीं गया और उस गवाक्ष की ओर मुँह किये बैठा रहा। उस दिन शाम तक मुझे वह चेहरा दिखाई न दिया, लेकिन गवाक्ष के परदे के पीछे किसी के हिलने की छाया दिखाई दी। तीसरे दिन शाम को गवाक्ष का परदा हट गया और चांद जैसा सुंदर चेहरा चमक उठा। मैंने उस चेहरे के लिए अपने आपको सौंप दिया और कहा—"सुंदरी, मैं परदेशी हूँ। इस कैरो नगर में प्रवेश करते ही शुभ शकुन की तरह मैंने तुम्हारा चेहरा देखा। क्या मेरी इच्छा पूरी हो जायगी?"

उस सुंदरी के चेहरे पर भय दिखाई दिया। मगर दूसरे ही क्षण उसने गवाक्ष में से बाहर झुककर गुप्त रूप से कहा—"अब तुम चले जाओ! आधी रात के वक़्त आ जाओ।" ये शब्द कहकर वह मंत्रवत गायब हो गयी।

मेरी खुशी की सीमा न थी। उस खुशी में मैं अपने सारे कष्टों को भूल गया। मैंने सराय में लौटकर खूब स्नान किया, फिर आधी रात के वक़्त राजमहल के गवाक्ष के पास पहुँचा। गवाक्ष से एक ताड़ की सीढ़ी लटक रही थी। मैं हिम्मत करके उस पर चढ़ा और महल के भीतर पहुँचा। दो कमरों को पार करने पर मुझे तीसरे कमरे में वह नारी दिखाई दी।

मैंने उस युवती को अपनी करुण कथा सुनायी। उसने आंसू बहाये।

"तुम चिंता न करो। तुम्हारी आंसू की एक बूंद से मेरी सारी तक़लीफ़ें दूर हो जायेंगी।" मैंने समझाया।

युवती ने तब अपनी कहानी यों सुनायी—"मैं सुल्तान की प्यारी बीबी हूँ। मेरा नाम लबीबा है। मेरी सौतियां मुझे राजमहल से भगाने की हर तरह की कोशिशें कर रही हैं। इसलिए मुझे अपने शौहर से किसी तरह का सुख नहीं मिलता। तुमको देखते ही मैंने दिल में सोचा कि तुम जैसा खाविंद हो तो मैं कैसा सुख पाती!"

हम दोनों बात कर ही रहे थे कि इतने में किसी ने दर्वाज़ा खटखटाया। लबीबा डर के मारे कांप उठी। वह बोली—"हम खतरे में फँस गये हैं। सुलतान को छोड़ कोई भी मेरा दर्वाज़ा नहीं खटखटाता!"

उसका डरना सच निकला। दूसरे ही क्षण दस काले गुलाम कमरे में आये, मुझे गवाक्ष की राह से नदी में फेंक दिया। एक दूसरे गवाक्ष से लबीबा को मैंने नदी में गिरते देखा। मैं किसी न किसी तरह जान से बच गया, मगर मेरी वजह से नदी में गिरायी गयी उस बदनसीब युवती के वास्ते मैंने नदी में ढूंढ़ा, मगर वह न मिली।

मैं तुरंत ईजिफ़्ट को छोड़ बग्दाद नगर में आ पहुँचा। मेरे पास सिर्फ़ सोने का

एक दीनार बचा था। मैंने उस दीनार से मिठाई, फल, गुलाबी इत्र वगैरह खरीदा, दूकानों के पास जा बेचने लगा। मैं अच्छा गाता था, इसलिए मेरी चीजों की बिक्री अच्छी होने लगी।

एक दिन बग्दाद नगर का सबसे बड़ा व्यापारी मेरे पास आया। मुझसे एक फल खरीदा और मुझे अपनी दूकान में बगल में बिठाकर मेरा नाम पूछा।

"हुज़ूर! मेरे घाव को भरने दीजिये! उन पुरानी बातों की याद करने न दीजिये।" मैंने जवाब दिया।

तुरंत उस दूकानदार ने बात बदल दी। उसने मेरे व्यापार की बिक्री और फ़ायदे के बारे में दो-चार सवाल किये, तब मुझे दस सोने के दीनार देकर भेज दिया।

उस दिन से मैं बराबर उस दूकान के पास जाता, कोई न कोई चीज़ बेच आता, एक दिन उसने मेरा वृत्तांत पूछा। मैंने अपनी सारी कहानी उसे सुनायी।

"बेटा, अबू अल कासिम! मैं तुम्हारा बाप बनता हूँ। मैं तुम्हारे बाप से भी बड़ा अमीर हूँ। मेरे कोई संतान नहीं है। तुम्हारी तक़लीफ़ें भी दूर हो जायेंगी। इस थाली को दूर फेंक दो।" आवेश में आकर दूकानदार ने मुझसे कहा।

दूसरे ही दिन वह दूकान बंद करके मेरे साथ बस्त्रा के लिए चल पड़ा। वही उसका जन्म-स्थान था। हमने निश्चय किया कि आइंदा हम बस्त्रा में रहेंगे।

बस्त्रा में मेरे जान-पहचान के कई लोग थे। मेरी हालत को सुधरी देख वे सब बहुत खुश हुए। मैंने अपने नये बाप को खुश करने की हर तरह से कोशिश की। उसने कई बार मुझसे कहा था—"अबू अल कासिम, मैंने तुमको जिस घड़ी में देखा था, वह बड़ी अच्छी निकली। तुम ईमानदार हो, प्रेम-पात्र भी हो। मेरे बाद मेरी सारी संपत्ति के तुम ही हक़दार हो!"

साल भर मैंने अपने दोस्तों को छोड़ नये बाप की सेवा की। इस बीच वह

बीमार हो गया। उसने मुझे पास बुलाकर कहा–"बेटा, कई बाप एक दिन भी अपने पुत्रों द्वारा जो सुख प्राप्त नहीं कर पाते, वह सुख तुमने मुझे साल-भर में दिया। इसलिए मैं तुमको दुआ देता हूँ। अल्लाह से बुलावा आने के पहले मुझे एक काम पूरा करना है। कई पीढ़ियों से हमारे वंश को इतनी संपत्ति प्राप्त होती आ रही है, जितनी दुनिया के सारे राजाओं के पास भी नहीं है। वह संपत्ति पहले हमारे वंश को कैसे प्राप्त हुई! उसका रहस्य मेरे दादा ने मेरे बाप को बताया। मेरे बाप ने मुझे बताया।"

इसके बाद उसने गुप्त रूप से थोड़ी बातें मेरे कान में बतायीं और कहा–"यह हमारे वंश की कभी न घटनेवाली संपत्ति है। इसलिए तुम दिल खोलकर दान करो। सबसे पहली चीज यह है कि तुम अपने सुख का ख्याल रखो। अल्लाह की तुम पर मेहर्बानी होगी और वे तुमको सुख और शांति देंगे।" इन शब्दों के साथ उसने अपनी आँखें मूँद लीं।

मैंने उसके प्रति अपने सारे कर्तव्य पूरा करके उस संपत्ति पर अधिकार कर लिया। मेरे परिचित लोगों ने इस बार भी यही भविष्य वाणी दी कि मैं फिर से भिखारी बन जाऊँगा। लेकिन ऐसा न हुआ। दिन ब दिन मेरा खर्च बढ़ता गया। बस्त्रा में आनेवाले सभी परदेशियों को मैं राजोचित आतिथ्य देने लगा। फिर भी मैं गरीब न बना।

मैं जो खर्च करता था, इसे देख नगर के अधिकारियों की ईर्ष्या भड़क उठी। एक दिन नगर का प्रधान कोत्वाल मेरे पास आया, इधर-उधर की बातें करने के बाद बोला–"चाहे कोई जितना भी धन खर्च करे, मुझे क्या मतलब? मैं अपना पेट भरने नौकरी करता हूँ। मगर अचरज की बात यह है कि जब रोटियों का दाम बढ़ा, तभी मेरी दूधारू गाय सूख गयी।"

"आप के पूरे परिवार के लिए रोटी

और दूध के वास्ते लगभग कितना खर्च होता है?" मैंने पूछा।

"हर रोज़ लगभग दस दीनार खर्च हो जाते हैं।" कोत्वाल ने जवाब दिया।

"यह काफ़ी नहीं होगा। मैं आपको रोज़ सौ दीनार दूंगा। आप हर महीने की पहली तारीख को आकर हमारे खजांची से धन लेते ज़ाइये।" मैंने उन्हें समझाया।

बड़ा कोत्वाल कृतज्ञता पूर्वक मेरे हाथ को अपने हाथ में लेकर चूमने को हुआ। मैंने यह सब अल्लाह की मेहर्बानी मानकर उनको ऐसा करने से रोका।

दूसरे दिन काज़ी ने मेरे पास पहुँच कर कहा—"बेटा, हमारा एक पुराना रिवाज है कि अपनी आमदनी में से पाँचवाँ हिस्सा गरीबों में बांटा जाय। हम जैसे लोग इस नियम का उल्लंघन नहीं कर सकते।"

"आप जो कहते हैं, मेरी समझ में नहीं आता। मैं बहुत दिनों से आप से एक निवेदन करना चाहता था। गरीबों में बांटने के लिए मैं आपको रोज़ एक हज़ार दीनार देना चाहता हूँ। मेहर्बानी करके आप इन्हें स्वीकार कीजिये!" काजी ने मेरी इच्छा को मेहर्बानी से मान लिया।

इसके तीन दिन बाद बस्त्रा का शासक (वली) मुझे अपने यहाँ बुला भेजा। बड़ी मेहर्बानी से बात की और कहा—"सब लोग जानते हैं कि तुम जैसा युवक अपनी संपत्ति का ब्यौरा मुझे गुप्त रूप से दे तो मैं उसके द्वारा किये जानेवाले फ़िज़ूली खर्च में दखल न दूंगा।"

"वली साहब को मैं उस संपत्ति को दिखा देता तो क्या ही अच्छा होता। मगर इस बीच मैंने यह सोचा था कि मेरे पास ज़ो थोड़ी-बहुत संपत्ति है, उसमें से रोज़ दो हज़ार दीनारों को साधुओं में बांटने के लिए कोई अधिकारी होता मुझे इस कष्ट से फ़ुरसत मिल जाती।"

वली साहब ने मेरी तरफ़ से उस रक़म को साधु-सज्जनों के बीच दान करने के लिए बड़ी मेहर्बानी से मान लिया।

"उस दिन से लेकर मैं बराबर यह रिश्वत देता आ रहा हूँ। इसलिए ये तीनों अधिकारी मुझे मनमाने ढंग से लोगों को भेंट देने दे रहे हैं। यही मेरी अक्षय संपत्ति की कहानी है।"

खलीफ़ा के मन में उस युवक की संपत्ति को देखने की प्रबल इच्छा पैदा हुई। उसने उस युवक से कहा–"मैं यह सोच भी नहीं पाता हूँ कि चाहे जितना भी दान करे, संपत्ति अक्षय कैसी होती है? जब तक मैं उसे अपनी आँखों से न देखूंगा, तब तक मैं यक़ीन नहीं कर सकता। मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि इस रहस्य को मैं दूसरों पर प्रकट न करूँगा।"

"अतिथि को असंतुष्ट करके भेजना मौत से भी पीड़ाजनक है। इसलिए मैं आपकी इच्छा को पूरा करने से इनकार नहीं कर सकता। मगर आपको अपनी आँखों पर पट्टी बंधवानी होगी। मैं आप के साथ तलवार लेकर चलूंगा। यदि आप मुझ पर जबर्दस्ती करने की कोशिश करेंगे तो मैं आप पर तलवार का प्रयोग करूँगा। यदि इससे आपको कोई आपत्ति न हो तो आप मेरे साथ चलिये।" अबू अल कासिम ने कहा।

"मैं आपकी सभी शर्तों को मानने के लिए तैयार हूँ।" खलीफ़ा ने कहा।

अबू अल कासिम खलीफ़ा की आँखों पर पट्टी बांधकर ले गया। गुप्त सीढ़ियों

से होते हुए तहखाने में ले गया। वहाँ से कई सुरंगों में से जाकर एक विशाल गुफा में पहुँचा दिया। गुफा बड़ी गहाई में थी। वहाँ पर खलीफ़ा ने कासिम के कहने पर आँखों पर से पट्टी खोल दी। गुफ़ा की दीवारों पर बिठाये गये मणियों की कांति से खलीफ़ा की आँखें एक दम चौंधिया गयीं। उस कांति में खलीफ़ा को एक सौ फ़ुट व्यास वाला संगमरमर से निर्मित एक सरोवर दिखाई दिया। वह सोने की अशर्फ़ियों से भरा था। उसके किनारों पर बारह मूर्तियाँ थीं। हर एक मूर्ति एक किस्म के मणि से निर्मित थी। सभी मूर्तियाँ सोने के चबूतरों पर बिठायी गयी थीं।

"सोने के सरोवर का कोई तल न था। मेरे वंश के सभी लोगों ने दिल खोलकर खर्च किया, मगर आधी इंच के बराबर सोना भी न घटा।" ये शब्द कहते अबू अल कासिम खलीफ़ा को एक दूसरे कक्ष में ले गया। वहाँ पर इससे बड़ा एक और सरोवर था। उसमें कच्चे हीरे भरे थे। वहाँ दो कतारों में पेड़ थे जो खलीफ़ा को भेंट में दिये गये "मयूर पेड़" जैसे थे।

सरोवर के ऊपर छत पर यों लिखा हुआ था–"जो दिल खोलकर खर्च करता है, वही अमीर है। दोस्ती के सिवाय कोई चीज़ बचायी नहीं जा सकती।"

खलीफ़ा इस तरह कई कक्षों में गया। कासिम की संपत्ति को देखते जब वह थक गया, तब उसकी आँखों पर कासिम पट्टी बांध कर अपने घर ले आया।

जब दोनों तकियों के सहारे बैठ गये, तब खलीफ़ा ने कासिम से कहा–"तुमने मुझे एक युवती को भेंट किया, मालूम होता है कि ऐसी युवतियाँ तुम्हारे घर और कई होंगी!"

"क्यों नहीं? मगर उन सब से ज्यादा मुझ से प्यार करके नदी की बलि हुई एक युवती की याद मेरे लिए बहुत ही क़ीमती है। अगर लबीबा फिर से मुझे मिल सके तो आपने जो संपत्ति देखी, वह सब मैं दे सकता हूँ।" अबू अल कासिम ने कहा।

खलीफ़ा को आश्चर्य हुआ कि कासिम इतने साल तक उस युवती को भूल नहीं पाया, तब बोला–"सामने जो भारी संपत्ति पड़ी हुई है, उस सुख के सामने बीती हुई तक़लीफ़ों को भूल जाना चाहिये।"

खलीफ़ा कासिम से विदा लेकर भेंट में प्राप्त वस्तुओं तथा गुलामों के साथ बग्दाद लौट आया। तुरंत उसने कारागार से जफ़र को बुला भेजा। उसे माफ़ किया और अनेक पुरस्कार देकर कहा–"जफ़र! अबू अल कासिम का हम किस प्रकार सत्कार करे? उसे जो भी पुरस्कार दे, कम ही मालूम होगा।"

जफ़र ने सलाह दी–"उसको बस्रा का शासक बनाया जा सकता है।"

"तब तो तुम जल्द रवाना होकर जाओ और कासिम को बुला लाओ। उसका राज्याभिषेक हम अपनी आँखों के सामने करेंगे।" खलीफ़ा ने कहा।

जफ़र के साथ जब अबू अल कासिम आया, तब खलीफ़ा ने पुत्र सहज स्नेह के साथ उसका आलिंगन किया। वह खुद कासिम को स्नानागार में ले गया। उसके स्नान करने के बाद नाश्ता करते समय गीत गाने के लिए एक गुलाम युवती को बुला भेजा। अबू अल कासिम उस गुलाम युवती को देखते ही जोर से चिल्ला पड़ा और बेहोश हो गया।

जब वह होश में आया तब उसकी बेहोशी का कारण मालूम हुआ। खलीफ़ा के बुलाने पर जो युवती आयी, वह और कोई न थी, बल्कि लबीबा थी। नदी में बह कर जानेवाली लबीबा को एक मछुए ने बचाया और उसे एक गुलाम के रूप में बेच दिया। उसे जिस आदमी ने खरीदा था, वह कुछ समय बाद लबीबा को बग्दाद ले आया और राजमहल में उसे गुलाम के रूप में बेच दिया।

इस तरह अबू अल कासिम बस्रा का राजा बना और साथ ही अपनी प्रेयसी को भी पाया। इसके बाद उसने बहुत समय तक सुख की जिंदगी बितायी।

भला आदमी

एक गाँव में रत्नाकर नामक एक वैद्य था। जड़ी-बूटियों के द्वारा वह सब प्रकार की बीमारियों को भगाने में निपुण था। एक बार उसके देश में बड़ा अकाल आया, इसलिए रत्नाकर अपने देश को छोड़ दूसरे देश के एक गाँव में जा बसा। उस गाँव में एक ज़मीन्दार था।

रत्नाकर अकेला था। इसलिए उसे जो थोड़ी-बहुत आमदनी होती, उसी से अपना गुज़ारा कर लेता था। बीमारियों के इलाज में वह चन्द दिनों में इतना मशहूर हो गया कि सैंकड़ों की तादाद में लोग उसके पास आने लगे। लकवा से लेकर साँप के काटने तक के रोगों को वह चन्द मिनटों में ठीक कर देता था। वह गरीबों से पैसा न लेता था, इसलिए उसका नाम दूर तक फैल गया। लोग उसे देवता के समान मानते थे।

रत्नाकर ने कुछ ही दिनों में जो यश प्राप्त किया, उसे देख ज़मीन्दार को बड़ी ईर्ष्या हुई। रत्नाकर के आने के पहले आसपास के गाँवों के लोग ज़मीन्दार को देवता के समान मानते थे। मगर अब रत्नाकर के सामने ज़मीन्दार का यश मिट चला था। खासकर ज़मीन्दार ने कभी गरीब किसानों की कोई मदद न की थी। ऐसे लोगों की रत्नाकर ने बड़ी भारी मदद पहुँचायी थी।

ज़मीन्दार रत्नाकर के यश को मिटाना चाहता था। उसने बहुत-कुछ सोचा भी, लेकिन उसे कोई उपाय न सूझा। या तो रत्नाकर को गाँव से भगाना है या उसके इलाज करने से मना करना है। गाँव से भगाना ज़मीन्दार के लिए कोई बड़ा काम न था, पर इससे उसकी बदनामी हो सकती थी। दूसरा काम बड़े

आनन्द मिश्र

मुश्किल का था। समय साथ दे, तो यह काम हो सकता था।

एक दिन ज़मीन्दार ने देखा कि रत्नाकर दवाइयों की थैली लिये कहीं जा रहा है।

"रत्नाकर, कहाँ जाते हो?" ज़मीन्दार ने पूछा।

"पड़ोसी गाँववालों ने इलाज के लिए बुलाया है, फिर कल लौट आऊँगा।" यह कहकर रत्नाकर चला गया।

रत्नाकर को इलाज करने से रोकने के लिए ज़मीन्दार को एक अच्छा मौक़ा मिला। उस रात को ज़मीन्दार ने अपने नौकरों द्वारा रत्नाकर के घर में सेंध लगवायी और दवाइयों की शीशियों को फोड़वा दिया और जड़ी-बूटियों के बण्डलों को जलवा दिया।

दूसरे दिन जब रत्नाकर घर लौटा, तो उसके इंतज़ार करते कई लोग बैठे थे। रत्नाकर ने ताला खोलकर भीतर प्रवेश किया तो देखता क्या है, उसकी सारी दवाइयाँ नष्ट की गयी हैं। उसे दीवार में सेंध भी दिखाई दी।

रत्नाकर सोचने लगा—"यह सेंध लगानेवाला चोर कैसा विचित्र आदमी है? उसने अपने काम की चीज़ों को छोड़ रोगियों के काम देनेवाली दवाइयों को नष्ट क्यों किया? किसी ने मुझ पर ईर्ष्या

के कारण यह काम किया है, मैंने किसको नुक़सान पहुँचाया है?"

इस तरह रत्नाकर ने कई महीनों तक बड़ी मेहनत के साथ जो दवाइयाँ तैयार की थीं, वे सब नष्ट हो गयी थीं।

इलाज के लिए आये हुए रोगियों ने रत्नाकर के प्रति सहानुभूति दिखायी और चोर को गालियाँ दीं। मगर ज़मीन्दार अपनी विजय की खुशी में प्रसन्न था।

इसी समय ज़मीन्दार के नौकर जमीन्दार के लड़के को ढोते हुए ले आये और बोले— "सरकार, छोटे सरकार को खेत में किसी सांप ने काट खाया है। ये बेहोश हो गये हैं, खतरे में हैं।"

"अरे, पड़ोस में रत्नाकरजी हैं, उनके पास ले जाओ।" वहाँ पर इकट्ठे ग्रामवासियों ने कहा।

सब लोग लड़के को ले रत्नकार के घर पहुँचे। ज़मीन्दार ने भी वैद्य के पास जाकर कहा–"रत्नाकरजी, मेरे पुत्र को सांप ने काटा है, इसे बचाइये।"

"क्या करूँ साहब? कल रात को दुष्टों ने मेरे घर में सेंध लगा कर सारी दवाइयों को नष्ट कर डाला है।" रत्नाकर ने जवाब दिया।

ज़मीन्दार को लगा कि किसीने उसकी पीठ पर कोड़े लगाये हो। वह भर्राई आवाज़ में बोला–"रत्नाकरजी, यह दुष्टता मैंने ही की है। मुझे क्षमा करो। मेरे बेटे को किसी न किसी तरह बचा लो। ज़िन्दगी-भर मैं तुम्हारे उपकार को नहीं भूलूँगा।" ज़मीन्दार पछताने लगा।

"अभी आया।" ये शब्द कहते रत्नाकर बाहर की ओर दौड़ गया।

"अब रत्नाकार क्यों लौटने वाले हैं? वे भी बदला लेंगे।" एक ने कहा।

"मैंने अपने बेटे को अपने ही हाथों में मार डाला है।" ज़मीन्दार रोने लगा।

मगर रत्नाकर थोड़ी ही देर में लौटा और जड़ी-बूटियों के रस को निकाल कर लड़के की नाक और आँखों में निछोड़ दिया। बड़ी देर बाद ज़मीन्दार का लड़का हिला। इसके थोड़ी ही देर बाद वह होश में आया और उठ बैठा।

वहाँ पर इकट्ठे हुए सब लोगों की जान में जान आ गयी।

इसके बाद ज़मीन्दार बिलकुल बदल गया। उसने रत्नाकर को नुक़सान मद्दे काफ़ी धन दिया और दवाइयों को तैयार करने के लिए अपने नौकरों की मदद भी दी। उस दिन से लेकर ज़मीन्दार रत्नाकर को सब तरह की सहायता देने लगा। रत्नाकार ने उसी गाँव में अपना स्थिर निवास बनाया। विवाह करके आराम के साथ अपने दिन बिताने लगा। सब लोग कहने लगे कि रत्नाकर की वजह से ज़मीन्दार भी भला आदमी बन गया है।

अजीब वसीयतनामा

शीलादित्य एक मशहूर राजा था। उसके दो पत्नियाँ थीं। वे दोनों जुड़वीं नारियाँ थीं। इस शर्त पर उन जुड़वीं नारियों ने राजा के साथ विवाह किया कि राजा उन्हें समान आदर और अधिकार देगा। दोनों एक ही घड़ी में दो पुत्रों का जन्म देकर मर गयीं।

शीलादित्य के पुत्रों के नाम थे देवादित्य और सुरादित्य। सुरादित्य सरल स्वभाव का था और देवादित्य कटुस्वभाव का। वे दोनों अभी नाबालिग ही थे कि अचानक राजा शीलादित्य का देहांत हो गया। राजा की मृत्यु अचानक हो गयी कि इसलिए वह मंत्री के पास कोई अपना वसीयतनामा छोड़ न पाया।

राजकुमारों के बालिग होने तक मंत्री नयपाल ही राज-काज संभालता रहा, फिर भी सामंत और सेनापति अपने राज्य के भविष्य के बारे में बड़े चिंतित थे। क्योंकि दोनों राजकुमार राजगद्दी के लिए हठ करेंगे, दोनों की माताएँ पट्टमहिषियाँ भी थीं। मगर उनके सामने इस समस्या का कोई हल न था।

राज्य को दोनों राजकुमारों में बाँटना किसीको पसंद न था। लोग कहा करते थे कि शीलादित्य के वंश के मूल पुरुष को महाकाली ने आदेश दिया है कि किसी भी हालत में राज्य का बँटवारा न हो, ऐसा बाँटने पर राज्य का विनाश निश्चित है।

समय बीतता गया। राजकुमार युवा हो गये। दोनों ने हठ किया कि राज्य उन्हीं को मिलना चाहिए।

इस हालत में प्रधान मंत्री नयपाल ने अपनी समस्या दरबारी जादूगर मायापाल के सामने रखी।

ए. सी. सरकार, जादूगर

मायापाल ने सारी बातें सुनकर कहा—"राजा के वसीयतनामे के बारे में तो मैं कुछ नहीं जानता, मगर राजा बहुत समय पहले कोई कागजात एक पेटी में रखकर मेरे पास छोड़ गये हैं, ताकि भविष्य में कभी अपने पुत्रों के बीच कोई विवाद उठ खड़ा हो जाय तो उसे हल कर सके। चाहें तो आप उस पेटी को खोल कर देख लीजिये, शायद आपकी समस्या हल हो जाय।"

दूसरे दिन प्रधान मंत्री ने भरे दरबार में सबके सामने पेटी को खोल कर उन चीज़ों को बाहर निकाला। उन्हें देख सब आश्चर्यचकित हो गये। क्योंकि उस पेटी में कागज़ों के तीन वृत्त थे। उन पर १, २, ३ अंक थे। उनका विवरण एक दूसरे कागज़ पर लिखा गया था।

"पहली संख्यावाला वलय देवादित्य को दिया जाय। यह मेरे राज्य और संपत्ति का चिह्न है। नयपाल को चाहिए कि इसे आड़े कटवाकर, दो वृत्त बनाकर देखें।"

देवादित्य ने एक कैंची लेकर अपने हाथ के वलय को आड़े काट दिया। वह वलय दो अलग वलयों में कट गया।

इसके बाद नयपाल ने दूसरी संख्यावाला वलय सुरादित्य के हाथ में दिया और उसे भी आड़े काटने को कहा। तब उस कागज़ को लेकर पढ़ा—"मेरी इच्छा है कि इस वलय के संकेत के अनुरूप मेरा राज्य हो।"

सुरादित्य ने जब दूसरे वृत्त को आड़े काट दिया तब वह दो अलग वलयों के बनने के बदले एक बड़ा वलय बन गया।

तब नयपाल ने तीसरी संख्यावाला वलय देवादित्य के हाथ में देकर एक कागज़ पढ़ा—"इसे आड़े काट दे तो विदित होगा कि मैं अपने पुत्रों को किस रूप में देखना चाहता हूँ और वे कैसे राज्य करें?"

देवादित्य ने जब तीसरे वलय को आड़े काट दिया तब दो वलय तो बने, मगर

एक वलय में दूसरा वलय रह गया और अलग निकल नहीं आया।

सब को यह समझते देर न लगी कि ये वलय ही महाराजा का वसीयतनामा है। देवादित्य और सुरादित्य ने अपने पिता की इच्छा का पालन करने का निश्चय किया। दोनों ने स्नेहपूर्वक परस्पर आलिंगन किया और आनंदबाष्प गिराये। इसके बाद राज्य का बंटवारा नहीं हुआ। राज्य के शासन में दोनों ने समान रूप से जिम्मेदारी लेकर समर्थता के साथ शासन किया।

जो जटिल समस्या सामने थी, वह बड़ी आसानी से हल हो गयी। इसलिए सबके दिल हलके हो गये। उस दिन रात को राज्य की ओर से एक बड़ी दावत दी गयी। दावत से घर लौटते वक़्त नयपाल ने मायापाल से पूछा—"राजा ने अपने वसीयतनामे में जादू का प्रयोग किया है, क्या यह विद्या राजा को तुमने ही सिखायी?"

"जी हाँ, राजा ने मरने के पहले मेरे पास थोड़ी-सी जादू की विद्याएँ सीख ली थीं। मैं इन वलयों का जादू आपको दिखा सकता हूँ। जब आपको फ़ुरसत हो तब आप एक बालिश्त भर चौड़े तथा तीन हाथ के लंबे कागज़ के टुकड़ों को लेकर मेरे घर आइये।"

फ़ुरसत के समय एक दिन नयपाल कागज़ के टुकड़े लेकर मायापाल के घर पहुँचा। मायापाल ने पहले कागज़ के छोरों को चिपका कर एक वलय बनाया, दूसरे कागज़ के छोरों को चिपकाने के पहले उस कागज़ में एक ऐंठन कर दी, तीसरे कागज़ में दो ऐंठन बना कर उसके छोरों को चिपकाया। (नीचे का चित्र देखें)

नयपाल ने जब कैंची से उन वलयों को आड़े काट दिया, तब पहला कागज़ दो अलग वलय बन गया। दूसरा कागज़ एक ही बड़ा वलय बना, तीसरा कागज़ दो वलय तो बना, पर एक वलय में दूसरा वलय फँस गया था।
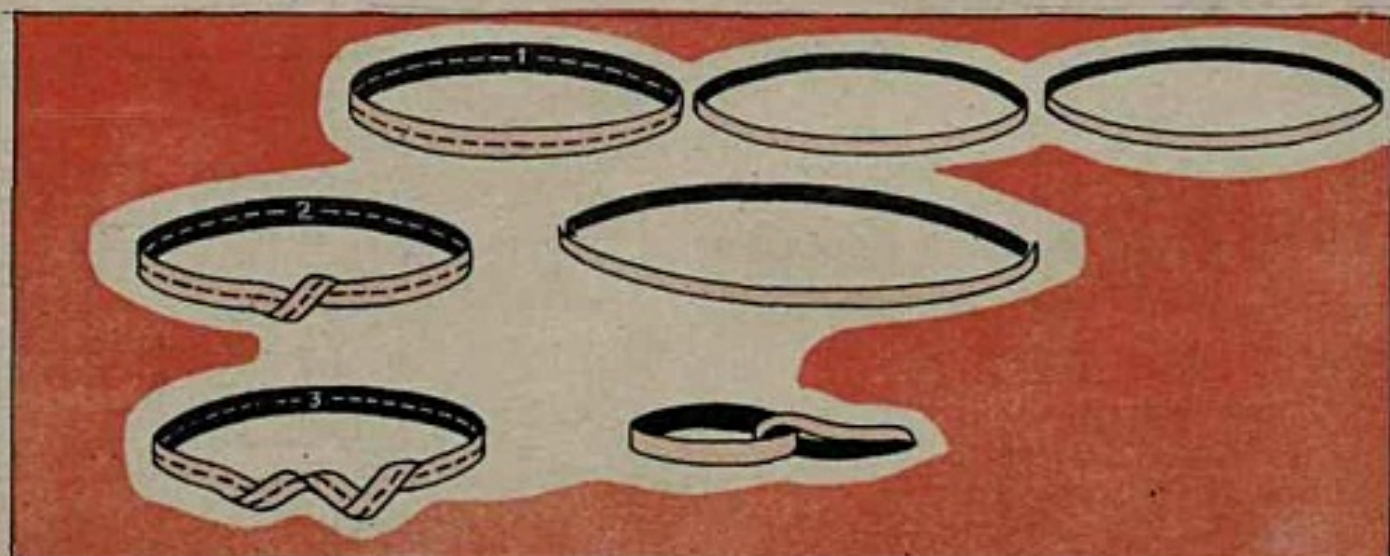
पंचकल्याणी

[३]

श्यामल नगर के राजा के प्रश्न का उत्तर वीरदास ने यों दिया : मैं एक दिन शिकार खेलने गया। तभी मुझे पीछे की ओर से धुआ ऊपर उड़ते दिखाई दिया। उस धुएँ का कारण जानने के ख्याल से मैं पहाड़ के छोर पर पहुँचा। एक घाटी में से वह धुआ उड़ रहा था। मैंने घाटी में झांककर देखा तो धुए की वजह से मेरा दम घुटने लगा और मेरा सर चकराया। मैं उस घाटी में लुढ़क गया। मेरी क़िस्मत प्रबल थी, इसलिए गहरी चोट न लगी। लेकिन मेरी समझ में न आया कि उस घाटी में से बाहर कैसे निकलूं? क्योंकि ढलानवाले उस पहाड़ पर चढ़ना मेरे लिए संभव न हुआ। मैंने सर उठाकर ऊपर तो देखा।

इसी समय एक ओर से मुझे कोई आहट सुनायी दी। मैंने उस ओर देखा। एक राक्षस बीस बक़रियों तथा एक हिरण को हाँकते चला आ रहा था। उसने उन सबको एक गुफ़ा में हाँक दिया और मेरे पास पहुँचकर कहा—"तुम आ गये! तुम्हारे वास्ते मैंने छुरी पैनी कर रखी है।"

"अजी! मैं कौन-सा मोटा आदमी हूँ! तुम्हारे लिए एक कौर के बराबर भी नहीं हूँ। हाँ, मुझे लगता है, तुम काने हो। मैं आंख का वैद्य हूँ। तुम्हारी दूसरी आँख ठीक कर सकता हूँ।"

राक्षस ने मेरी बात मान ली। मैंने एक हांड़ी में पानी गरम कराया। हांड़ी में उसे बिठाया। मुट्ठी भर घास लाया, राक्षस की आँखों पर पट्टी बनाने

रमणलाल

का अभिनय करते उसकी दूसरी आँख को भी फोड़ दिया। राक्षस कराहते हुए हांड़ी में से बाहर कूद पड़ा और गुफ़ा के द्वार पर जा खड़ा हुआ।

मैं उस रात को गुफ़ा की दीवार से सटे बैठा रहा। यह सोचकर डर गया कि ज़ोर से सांस ले तो राक्षस को मेरा पता मालूम हो जायगा। सवेरे जब पक्षियों का कलरव सुनाई दिया तब राक्षस ने मुझ से पूछा—"तुम सोते हो या जागते हो? मेरी बकरियों को खोल दो।"

मैंने अपनी छुरी से हिरण को मार डाला और उसका चमड़ा निकालने लगा।

"क्या करते हो?" राक्षस ने पूछा।

"बकरियों की रस्सियों की गांठें खुल नहीं रही हैं।" मैंने जवाब दिया।

इसके बाद एक-एक करके सभी बकरियों को मैंने खोल दिया। राक्षस हर एक के शरीर पर हाथ फेरते बोलता गया—"ऐ सफ़ेद बकरी! मैं तुमको देख नहीं पाऊँगा, लेकिन तुम मुझे देख सकते हो न?" इस तरह हर एक बकरी का नाम लेकर पुकारते बाहर छोड़ दिया।

आखिर हिरण का चमड़ा ओढ़े मैं रेंगते बाहर जाने के लिए चल पड़ा। राक्षस ने हिरण के चमड़े पर हाथ फेरते कहा—"ऐ मेरी हिरण, तुम मुझे देख सकते हो, मगर मैं तुमको देख न सकूंगा।" ये शब्द कहते उसने मुझे बाहर जाने दिया। गुफ़ा को पार करते ही मेरी जान में जान आ गयी।
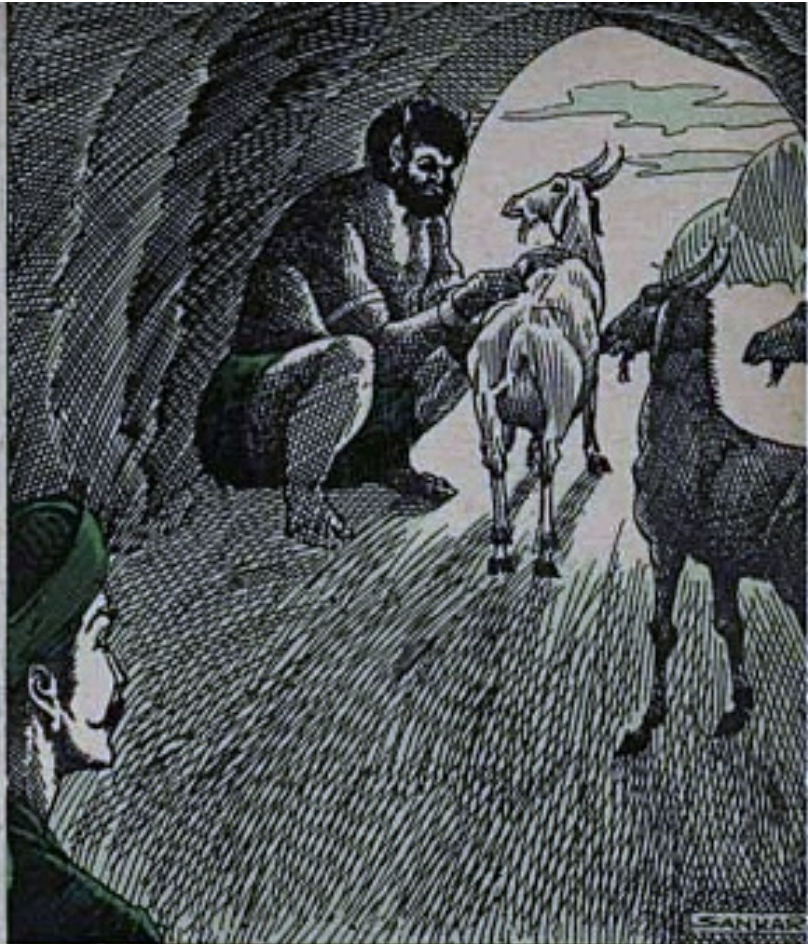
उस खुशी में मैं चिल्ला पड़ा—"अरे अंधे राक्षस! तुम मुझे पकड़ न पाये?"

राक्षस ने मेरी चिल्लाहट सुनकर कहा—"अरे, तुम कैसे धूर्त हो! तुम्हारी धूर्तता पर मैं खुश हो गया हूँ। मेरी यादगारी के लिए यह अंगूठी ले लो।"

"मैं अंगूठी के वास्ते तुम्हारे पास नहीं आऊँगा। तुम उसे मेरी ओर फेंक दो।" मैंने जवाब दिया। राक्षस ने अंगूठी बाहर फेंक दी, मैंने उसे अपनी उंगली में पहनायी।

"क्या अंगूठी तुम्हारी उंगली में ठीक बैठ गयी ?" राक्षस ने पूछा।

"हाँ, हाँ, बिलकुल ठीक बैठ गयी।" मैंने कहा। राक्षस ज़ोर से हँस पड़ा और पूछा-"अरी अंगूठी! तुम कहाँ पर हो?"

"यहीं पर हूँ।" मेरी उंगली की अंगूठी ने जवाब दिया। उसकी आवाज़ को सुनकर राक्षस मेरी तरफ़ आने लगा। उंगली से अंगूठी निकालने की कोशिश की, पर वह नहीं निकली। तुरंत मैंने छुरी से अपनी उंगली काट दी और उस उंगली को दूर समुद्र में फेंक दिया।

इस बीच राक्षस अंगूठी से यह पूछते मेरी ओर बढ़ा चला आ रहा था कि "अंगूठी, तुम कहाँ पर हो?" अंगूठी ने समुद्र में से यही जवाब दिया कि "मैं यहाँ हूँ।" राक्षस समुद्र की ओर भाग गया और गहरे समुद्र में जाकर मेरे देखते-देखते डूब कर मर गया। इसके बाद मैं राक्षस की गुफ़ा में लौट गया। वहाँ की संपत्ति लूट कर बड़ी मुश्किल से अपने घर पहुँचा।

वीरदास ने यह कहानी सुना कर कहा- "उस दिन मैं जिस खतरे में फँस गया, वह जानलेवा था। अंगूठी वाली मेरी उंगली तो कट गयी, मगर मेरी जान बच गयी।" इन शब्दों के साथ वीरदास ने अपना हाथ उठाकर दिखाया। उसमें अंगूठी वाली उंगली न थी।

श्यामल नगर के राजा ने उसकी कहानी सुनकर कहा-"तुम्हारी यह कहानी अद्भुत है। मेरा विश्वास जम गया कि यह सच्ची कहानी है। तुमने अपनी कहानियों के ज़रिये अपने दो पुत्रों को बचा लिये। ऐसी ही एक और कहानी सुनाकर तुम अपने तीसरे पुत्र की भी जान बचा लो।"

वीरदास ने कहा-"मेरी ज़िंदगी में इससे भी खतरनाक एक घटना गुज़र गयी है।"

"अच्छा, तब तो उसे भी सुनाओ।" राजा ने कहा।

(शेष कहानी अगले अंक में)

शिवजी के दर्शन करने की सलाह देकर इंद्र अदृश्य हो गया, तब अर्जुन शिव की आराधना करने का निश्चय कर आगे बढ़ा। उसे रास्ते में एक अत्यंत सुंदर वन दिखाई दिया। उसके पेड़ बड़े ही मनोहर थे। फूलों से सुगंध फैल रही थी। अर्जुन को लगा कि शिवजी के बारे में तपस्या करने के लिए यह एक उपयुक्त वन है।

अर्जुन ने जटाएँ धारण कर वल्कल पहने चार महीने तक भीषण तपस्या की, उसके शरीर से भयंकर गर्मी पैदा हुई और सारे वन में धुआँ फैल गया। इसे देख उस वन में तपस्या करनेवाले ऋषि घबरा गये और शिवजी के पास जाकर बिनती की कि अर्जुन की इच्छा की पूर्ति करके उसके तप को बंद करा दे। शिवजी ने उन्हें यह समझा कर भिजवा दिया कि वे अर्जुन की इच्छा को जानते हैं और उसकी इच्छा पूरी की जायगी।

ऋषियों के चले जाने पर शिवजी ने किरात का वेष धारण किया। पार्वती और प्रमथों ने अपने अनुचरों को उचित वेष धरवाये, तब सब मिलकर अर्जुन के द्वारा तपस्या करनेवाले वन में विहार करने लगे।

इसी समय मूक नामक राक्षस सुअर के वेष में अर्जुन का वध करने आया। तप करनेवाला अर्जुन धनुष और बाण लेकर उस सुअर को मारने दौड़ा।

२९. ऊर्वशी का शाप

तभी किरात के वेष में स्थित शिवजी ने अर्जुन से कहा–"अरे, उस सुअर का वध मैं करूँगा, तुम हट जाओ।"

अर्जुन ने किरात की परवाह न की, बल्कि सुअर पर अपने बाण का प्रयोग किया, किरात ने भी सुअर पर बाण चलाया। दोनों के बाण लग कर वह राक्षस अपने असली रूप में प्रकट हो मर गया।

अर्जुन ने किरात से पूछा–"तुम कौन हो? इस निर्जन वन में औरत को साथ ले क्यों घूमते हो? यह राक्षस मुझे मारने आया तो मैं इसका वध कर रहा था, तुमने भी उस पर बाण क्यों चलाया? यह तो शिकारी का धर्म नहीं। तुम्हारे इस अपराध के लिए मैं तुम्हारा वध करूँगा।"

किरात के वेष में स्थित शिवजी अर्जुन की बातों पर हँस कर बोले–"इस बात की तुम चिंता क्यों करते हो कि मैं औरत को साथ ले घूमता हूँ? यह तो हमारे जंगली लोगों का धर्म है। इस निर्जन वन में तुम क्यों रहते हो? तुम देखने में सभ्य और कोमल प्रतीत होते हो! अब रही सुअर की बात, मैंने इसे पहले मारा। तुमने फिर इसी सुअर पर बाण चलाया। तुम यह सोचकर मेरी निंदा करते हो कि तुम बलवान हो! अगर तुम बलवान हो तो मेरे साथ युद्ध करो।" शिवजी ने इस प्रकार अर्जुन को भड़काया।

अर्जुन ने नाराज़ होकर किरात पर बाणों की वर्षा की। मगर किरात ने उनकी परवाह किये बिना कहा–"अरे, ये बाण ही कैसे! तुम्हारे पास इससे अच्छे बाण नहीं हैं? तुम इससे अच्छा युद्ध नहीं कर सकोगे?"

अर्जुन को संदेह हुआ कि इन अनुपम अस्त्रों की परवाह न करने वाला व्यक्ति किरात के वेष में स्थित कोई महानुभाव होगा। अगर वह मामूली किरात होता तो कभी भाग खड़ा हुआ होता। फिर भी अर्जुन ने बाण चलाना प्रारंभ किया।

थोड़ी ही देर में उसके सारे अक्षय तूणीर खाली हो गये।

अग्निदेव के द्वारा दिये गये अक्षय तूणीरों के खाली होते देख अर्जुन की शंका और बढ़ गयी। फिर भी अपने गांडीव की नोक से किरात को मारने का प्रयत्न करने लगा। गांडीव टुकड़े-टुकड़े होकर नीचे गिर पड़ा।

अर्जुन अब निरायुध था। उसने किरात पर पेड़ों की डालों को तोड़कर फेंक दिया। शिलाएँ उखाड़ कर फेंक दी। फिर भी किरात विचलित न हुआ। इस पर अर्जुन किरात पर हमला करके द्वन्द्व-युद्ध करने लगा। किरात भी अर्जुन पर मुट्ठियों का प्रहार करने लगा।

किरात की चोटें खाकर अर्जुन बेहोश हो गया। होश में आने पर उसने स्नान किया। मिट्ठी से बनाये गये शिवलिंग पर फूलों का गुच्छा रखा। थोड़ी देर तक ध्यान करके उठ कर किरात की ओर देखा तो फूलों का गुच्छा किरात के सर पर दिखाई दिया।

इसे देखने पर अर्जुन को आश्चर्य एवं प्रसन्नता भी हुई। अर्जुन ने समझ लिया कि अब तक उसने शिवजी के साथ ही युद्ध किया है। उसने साष्टांग दण्डवत कर शिवजी का स्तोत्र किया।

तब शिवजी ने अर्जुन की भक्ति पर प्रसन्न होकर कहा—"अर्जुन, तुम जैसा वीर तीनों लोकों में ढूंढने पर भी न मिलेगा। मैं तुम्हारी भक्ति पर प्रसन्न हूँ। तेज में तुम मेरे बराबर हो! मैं अपने दिव्य अस्त्र तुम्हें देता हूँ। इसे स्वीकार करने व प्रयोग करने में तुम समर्थ हो! इसकी महिमा के द्वारा तुम शत्रुओं को पराजित कर सकते हो।" इस प्रकार शिवजी ने अर्जुन को दर्शन दिये।

अर्जुन ने शिवजी के चरणों पर गिरकर अपने अज्ञान को क्षमा करने का निवेदन किया। शिवजी ने अर्जुन के साथ आलिंगन किया और उसका हाथ पकड़

कर कहा–"अर्जुन, तुम पूर्व जन्म में नर नामक ऋषि थे। कई हज़ार वर्षों तक तुमने तथा नारायण नामक ऋषि ने मिलकर बदरिकाश्रम में तप किया। तुम दोनों ने अनेक दुष्ट राक्षसों का वध करके इंद्र के पद को सुरक्षित रखा। उस वक़्त तुम्हारे हाथ जो धनुष था, वही अब तुम्हारे हाथ में है। मेरी माया के कारण ही तुम्हारे गांडीव और अक्षय तूणीर गायब हो गये हैं! तुम अपनी इच्छाओं को बताओ। मैं उनकी पूर्ति करूँगा।"

"महेश्वर, मुझे भीष्म, द्रोण, कर्ण और दुर्योधन के साथ भविष्य में युद्ध करना पड़ रहा है। उन महान वीरों को जीतने के लिए मुझे पाशुपतास्त्र तथा ब्रह्मशिरो नामक अस्त्र चाहिये। आप मुझे उन्हें प्रदान कीजियेगा।" अर्जुन ने बड़ी विनय के साथ निवेदन किया।

शिवजी ने अर्जुन को पाशुपतास्त्र का प्रयोग एवं वापसी की पद्धति भी मंत्र सहित सिखाया। गांडीव और अक्षय तूणीर भी उसे वापस मिल गये। इसके बाद शिवजी देखते-देखते पार्वती के साथ अदृश्य हो गये।

अर्जुन को लगा कि उसे मानों अपूर्व शक्ति प्राप्त हुई हो। उसे अद्भुत पाशुपतास्त्र प्राप्त हुआ। ईश्वर के दर्शन भी मिल गये। ईश्वर के स्पर्श से उसका शरीर भी पवित्र हो गया। अर्जुन के आनंद की सीमा न रही।

उसी समय लोक पालक इंद्र, यम, वरुण, कुबेर इत्यादि अपनी पत्नियों के साथ अर्जुन के पास आये। सब ने अपने-अपने अस्त्र अर्जुन को दिये। इंद्र ने अर्जुन को स्वर्ग के लिए निमंत्रित किया और वहाँ पर उसे दिव्यास्त्र देने की बात बतायी। इस पर सब लोकपाल अंतर्धान हो गये।

थोड़ी देर बाद अर्जुन के वास्ते इंद्र का रथ आया। उसका सारथी मातली था। उसने कहा–"अर्जुन, तुम्हारे वास्ते इंद्र ने

यह रथ भेजा है। वे देवता, गंधर्व, ऋषि एवं अप्सराओं के साथ दरबार लगाये तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

अर्जुन को लगा कि इंद्र के रथ पर सवार होने की बात दूर रही, बल्कि उसका स्पर्श करने की योग्यता भी उसमें नहीं है। फिर भी इंद्र का आदेश हुआ है, इसलिए उसने पहले मातली को सवार होने का निवेदन किया, तब वह रथ पर सवार हुआ।

रथ आकाश में उड़ा और सिद्ध मार्ग से जाने लगा। मार्ग मध्य में अर्जुन को जो विमान दिखायी दिये, उनमें स्वयं प्रकाशमान राजर्षि, युद्ध में मृत हुए वीर, सिद्ध, गंधर्व, अप्सरागण इत्यादि थे, मातली ने उन सब का परिचय कराया।

थोड़ी देर बाद अर्जुन को दूर पर अमरावती नगर दिखाई दिया। उसके बाहरी द्वार पर ऊँचा गोपुर था। उसे देख अर्जुन परमानंदित हुआ। नगर के भीतर नंदनवन में अप्सराओं के दल स्वेच्छापूर्वक विहार कर रहे थे। अर्जुन को लगा कि वह अब सचमुच दिव्यलोक में पहुंच गया है।

अर्जुन का रथ अमरावती नगर में प्रवेश करते ही इंद्र की आज्ञा पर देवता उसके स्वागत के लिए आगे बढ़े। गंधर्व, सिद्ध एवं अप्सराओं ने उसका मंगलमय उपचार किया। नारद इत्यादि देवर्षियों ने अर्जुन को आशीर्वाद दिये। अर्जुन द्वार पर रथ से उतरकर, प्राकारों को पार करते हुए इंद्र की सुधर्मा नामक सभा में पहुँचा।

इंद्र सभाभवन में ऊँचे आसन पर विराजमान था। उसके चतुर्दिक गंधर्व स्तोत्र पाठ कर रहे थे। वेद-घोष सुनाई दे रहा था। वहाँ पर सिद्ध, चारण, मरुत्त, विश्वदेवता, अश्विन, आदित्य, वसु, रुद्र, ब्रह्मर्षि, राजर्षि इत्यादि उपस्थित थे। इंद्र के सर पर सफ़ेद छत्र था। परिचारिकाएँ चँवर डुला रही थीं।
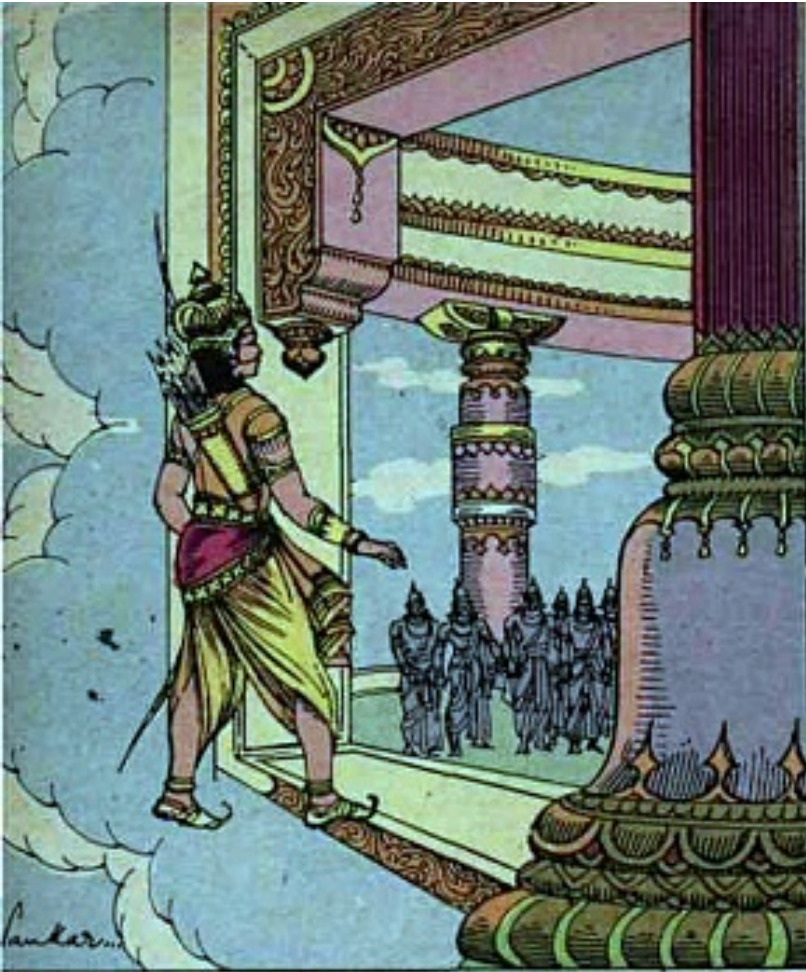
अर्जुन ने इंद्र के पास जाकर प्रणाम किया। इंद्र ने उसे उठाकर आलिंगन किया और अपने सिंहासन पर बगल में बिठा लिया। वह अपने पुत्र अर्जुन की ओर पुनः पुनः देखकर अत्यंत आनंदित हुआ। इंद्र और अर्जुन के मनोरंजन के हेतु नारद ने वीणा बजायी, तुंबुर ने गान किया और अप्सराओं ने नृत्य किया।

इसके बाद इंद्र के आदेश पर देवताओं ने अर्जुन को अर्घ्य एवं पाद्य प्रदान किया और उसे एक विश्राम गृह में ले गये। अर्जुन ने बहुत समय तक स्वर्ग में रहकर देवताओं के अस्त्रों के प्रयोग और वापसी का शिक्षण लिया।

उन्हीं दिनों में इंद्र ने अर्जुन को चित्रसेन नामक गंधर्व के द्वारा देवताओं के संगीत और नृत्य सिखलवाया। अर्जुन यद्यपि स्वर्ग में था, फिर भी अपनी माता और भाइयों के वनवास का स्मरणकर उसे दुख होने लगा।

इंद्र को संदेह हुआ कि अर्जुन भी ऊर्वशी पर मोहित हो गया है। उसने चित्रसेन को बुलवाकर कहा–"तुम ऊर्वशी से मेरी तरफ़ से कह दो कि अर्जुन की इच्छा की वह पूर्ति करे।" चित्रसेन ने ऊर्वशी से यह बात कही। ऊर्वशी इसके पहले ही अर्जुन पर मोहित थी। इसलिए ऊर्वशी ने इंद्र की आज्ञा का पालन करने को मान लिया और पूर्णिमा की रात को वह अर्जुन के निवास में गयी।

अपने को खूब अलंकृतकर सुगंध फैलाते रात के समय अपने निवास में आयी हुई ऊर्वशी को देख अर्जुन चौंक पड़ा और भक्ति के साथ उसके चरणों में प्रणाम कर बोला–"देवी! तुम्हारे आगमन का क्या कारण है? मैं तुम्हारी क्या सहायता करूँ?"

ऊर्वशी ने अपने आगमन का कारण बताया।

अर्जुन ने शिव का नाम लेकर कान बंद करते हुए कहा–"देवी! तुम मेरे लिए कुंतीदेवी के समान हो, शचीदेवी जैसी

SANKAR...
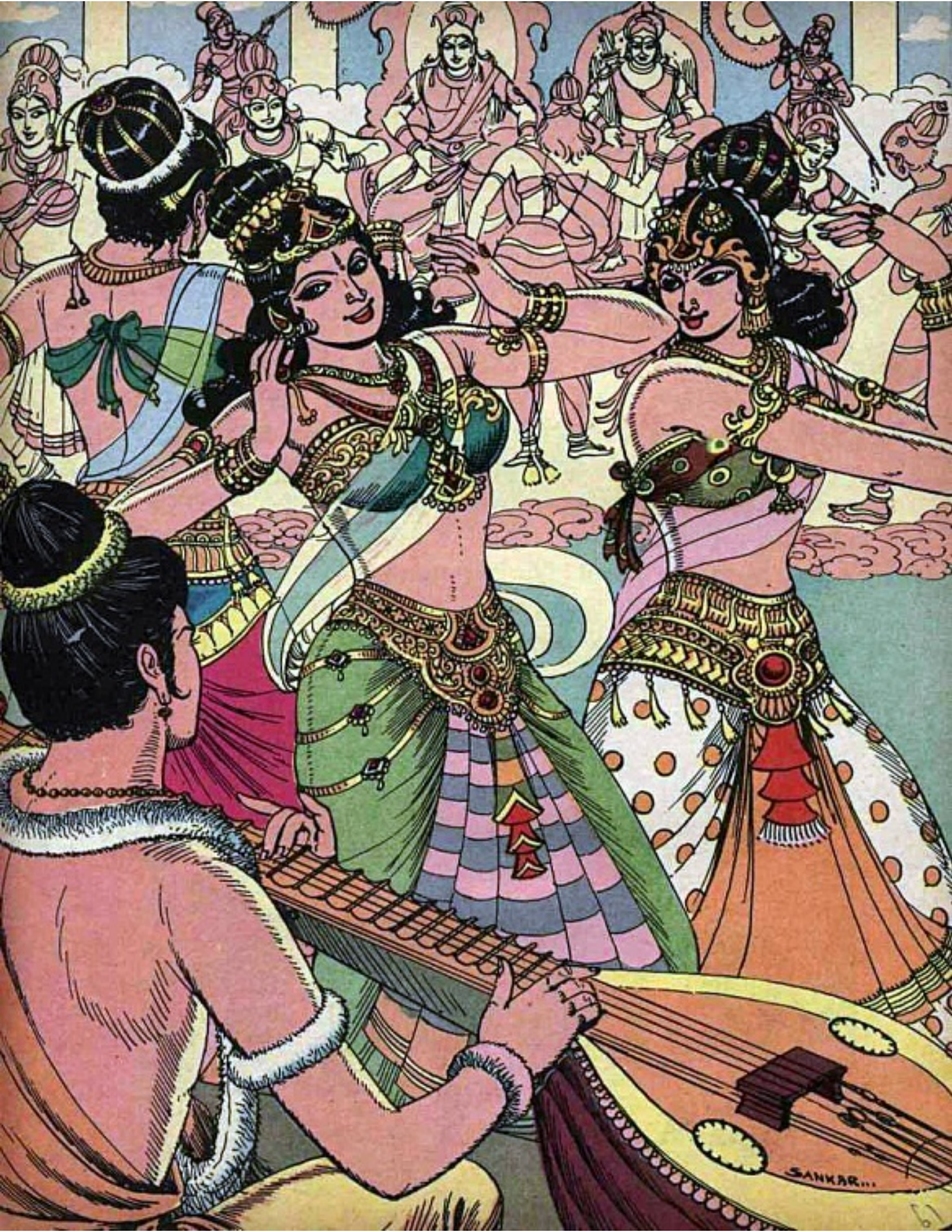
हो। हमारे वंश के मूलपुरुष पुरूरव की पत्नी हो। मैं तुमको माता-सम मानता हूँ।"

इस पर ऊर्वशी ने उत्तर दिया–"अर्जुन, हमारे इस देवलोक की रीति भिन्न है। तुम्हारे भूलोक के संबंध यहाँ पर माने नहीं जाते। इसलिए तुम नाहक़ उन शंकाओं को भूलकर मेरे साथ सुख भोगो।"

अर्जुन ने कहा–"माँ, तुम लोग देवता हो, यह सच है कि तुम लोग जो भी करो, गलती नहीं है, लेकिन मैं मानव हूँ। इसलिए तुम लोग जो काम करते हो, वे मैं नहीं कर सकूँगा। तुम मेरी माता के समान हो। इस वजह से मुझ पर बुरी दृष्टि न रखो, मुझे अपने पुत्र के रूप में स्वीकार करो।"

अपनी इच्छा की पूर्ति न होते देख ऊर्वशी को क्रोध आया। उसने कहा–"अर्जुन, मैं नारी हूँ! स्वेच्छाचारिनी हूँ। तुम पर मोहित होकर आयी तो तुमने मेरा तिरस्कार किया। इसलिए मैं तुमको शाप देती हूँ कि तुम नपुंसक बन जाओ! नपुंसक बनकर औरतों के बीच अंत:पुर में नृत्य व संगीत के साथ अपना समय बिताओगे!" इस प्रकार ऊर्वशी शाप देकर चली गयी।

अर्जुन ने वह रात बड़ी परेशानी से बितायी और दूसरे दिन चित्रसेन के आने पर उसने ऊर्वशी के आगमन और उसकी इच्छा का तिरस्कार करने का समाचार सुनाया।

ये बातें इन्द्र ने चित्रसेन के द्वारा सुनीं। अर्जुन के पास आकर बोला–"अर्जुन, मैंने नहीं समझा कि तुम ऐसा आत्म-संयम रखते हो। महर्षियों में भी ऐसे आत्म-संयमी कम होते हैं। तुम ऊर्वशी के शाप से डरो मत। तुम लोगों को एक वर्ष तक अज्ञातवास करना होगा न, तब इस शाप को भोगो। इस से तुम्हारा भला ही होगा। उस साल के बीतने पर ऊर्वशी का शाप जाता रहेगा।"

इंद्र की बातों से संतुष्ट होकर अर्जुन चित्रसेन के साथ घूमते स्वर्ग में अपना समय बिताने लगा।

शिवपुराण

[६]

वज्रांग ब्रह्मा से यह वर प्राप्तकर घर लौटा कि उसके एक पुत्र होगा। इसके कुछ समय बाद उसकी पत्नी वरांगी ने गर्भधारण किया और दसवें महीने में एक दिन प्रातःकाल एक पुत्र का जन्म दिया। उस शिशु के पैदा होते ही पृथ्वी कांप उठी। चारों तरफ़ अग्नि की ज्वालाएँ उठीं। समुद्रों में तूफ़ान आया। बवंडर उठ खड़ा हुआ जिससे पेड़ टूटकर गिर पड़े। ऐसे अनेक उत्पात देख जनता घबरा उठी।

वज्रांग और वरांगी ने अपने पुत्र का नाम तारक रखा। उसे बड़े ही लाड़-प्यार से पालने लगे। तारक दिन प्रति दिन बढ़ते पर्वत की भांति विशाल और भयंकर दिखाई देने लगा।

वरांगी ने एक दिन तारक से कहा– "बेटा, तुम ब्रह्मा के प्रति तपस्या करो और तीनों लोकों को जीतने के लिए वर प्राप्त करो।"

तारक एक निर्जन प्रदेश में गया और वहाँ पर घोर तपस्या शुरू की। उस तप के कारण उसमें जो अग्नि पैदा हुई, वह ऐसी दिखाई देने लगी मानो तीनों लोकों को जलानेवाली हो! तब देवता और ऋषि ब्रह्मा के पास जाकर विनती करने लगे–"भगवन, आप जाकर तारक से तपस्या बंद कराइये और लोकों की रक्षा कीजिये। वरना सारे लोक खाक हो जायेंगे।"

ब्रह्मा सरस्वती के साथ हंसवाहन पर सवार हो तारक के पास गये और बोले–

अंतिम पृष्ठ का चित्र

"तारक, मैं तुम्हारी तपस्या पर प्रसन्न हूँ। निस्संकोच मांगो कि तुम कौन-सा वर चाहते हो?"

तारक ने प्रसन्नता के साथ ब्रह्मा को प्रणाम करके कहा—"भगवान, मैं आपको प्रसन्न कर सका, इसलिए मेरी तपस्या सफल हुई। मुझे तीनों लोकों को जीतने की शक्ति प्रदान कीजिये। साथ ही मुझे ऐसा वरदान भी दीजिये जिससे शिवजी के द्वारा उत्पन्न व्यक्ति को छोड़ अन्य लोगों द्वारा मेरी मृत्यु न हो! ये दोनों वर मुझे प्रदान कीजिये।"

ब्रह्मा ने तारक को दोनों वर दिये और सत्य लोक में चले। तारक अपनी राजधानी शोणित नगर को लौटा और ब्रह्मा के द्वारा प्राप्त अपने वरों का परिचय अपनी माता वरांगी तथा गुरु शुक्राचार्य को दिया। इसके बाद उसने अत्यंत विनयपूर्वक अपने गुरु से पूछा कि तीनों लोकों पर दिग्विजय करने जाने के लिए मुहूर्त निर्णय करे।

शुक्राचार्य ने. मुहूर्त निश्चित किया। तारक ठीक समय पर अपनी चतुरंगी सेना लेकर चल पड़ा और स्वर्ग पर हमला करके देवताओं को जीत लिया। इंद्र से भेंट लेकर उसके सिंहासन पर अधिकार कर लिया। इसके बाद वरुण पर हमला करके उसके रथ और घोड़ों को उपहार में लिया, तब यम पर हमला किया। इस तरह क्रमशः एक एक करके सभी दिशाओं को जीत लिया। दिक्पालों को हरा कर अपार भेंटें लेकर तारक अपनी राजधानी को लौटा और सुखपूर्वक रहने लगा।

एक दिन नारद सभी लोकों का संचार करते तारक को देखने आया। तारक ने आगे बढ़ कर नारद का स्वागत किया, उसे अपने सिंहासन पर बिठा कर कहा—"महात्मा, मैंने आपकी कृपा से सभी दिशाओं को जीत लिया है।"

नारद ने कहा—"हे तारक! तुमने ब्रह्मा के द्वारा वर प्राप्त किये, इसलिए तुम्हारे

लिए दसों दिशाओं को जीतना कोई बड़ी बात नहीं है। तुम्हारा वध करनेवाला भी कोई नहीं है। क्योंकि तुमने ऐसा वर प्राप्त किया कि शिवजी के द्वारा उत्पन्न व्यक्ति को छोड़ कोई तुम्हारा वध नहीं कर सकता। शिवजी तो बैरागी बन कर तपस्या कर रहे हैं। इसलिए यदि तुम सचमुच तीनों लोकों के विजेता बनना चाहते हो तो वैकुण्ठ को भी जीत आओ।"

तारक नारद की सलाह पाकर भारी सेना ले वैकुण्ठ गया और रणभेरी बजा दी। विष्णु ने तारक के वरों का स्मरण किया और समझ लिया कि तारक का वध करना कठिन है। इसलिए उन्होंने बड़े स्नेह के साथ तारक को समझा-बुझा कर लौटा दिया।

उधर कैलास में हिमवान प्रसन्न था कि शिवजी पार्वती की सेवा पाने के लिए मान गये हैं। इसलिए पार्वती तथा उसकी सखियों को लाकर उनके द्वारा शिवजी को प्रणाम करवाया और कहा—"प्रभु! इस कन्या के द्वारा परिचर्या में कोई त्रुटि हो तो क्षमा करे।" इसके बाद पार्वती को सौंप कर मेनका के साथ अपने निवास को लौट गया।

उस दिन से लेकर पार्वती रोज सुबह से लेकर दुपहर तक बड़ी श्रद्धा और भक्ति

भाव से शिवजी की सेवा करती, उनके लिए आवश्यक फल, फूल व पानी लाकर रख देती, तब घर लौट कर अपनी सेवाओं का परिचय माता-पिता को कराती।

शोणितपुर लौटने के कुछ समय बाद तारक फिर सेना लेकर स्वर्ग में गया। इन्द्र के सिंहासन पर बैठ कर देवताओं के द्वारा सेवा पाने लगा। सभी लोकवासियों को सताने भी लगा। उसने ऋषि-मुनियों के यज्ञों में विघ्न डालना प्रारंभ किया।

इन्द्र आदि ने ब्रह्मा के पास जाकर निवेदन किया कि तारक उन्हें सता रहा है, अतः उनकी रक्षा करें।

ब्रह्मा ने तारक के पास जाकर समझाया–"तारक, तुमने तो तीनों लोकों को जीत लिया। तुम शोणितपुर में रहकर ही सभी लोकों पर शासन करते रहो। स्वर्ग को इन्द्र के हाथ में रहने दो। तुम्हारे और देवताओं के बीच वैर ही क्यों ?"

तारक ने ब्रह्मा की बात मान कर इन्द्र को स्वर्ग दे दिया। वह शोणितपुर लौट कर वहीं से तीनों लोकों पर शासन करने लगा। वह प्रति दिन ईश्वर की आराधना करते सुखपूर्वक रहने लगा।

इन्द्र ने स्वर्ग को पा लिया, परंतु उसे इस बात का बड़ा दुःख था कि उसे दूसरे के अधीन रहना पड़ रहा है, इसलिए एक दिन अपने गुरु बृहस्पति को बुलवा कर निवेदन किया–"गुरुदेव! मैं तीनों लोकों का अधिपति होकर भी तारक के अधीन रहता हूँ। यह मेरे लिए अपमान की बात है। इस अपमान को सहने की अपेक्षा मर जाना कहीं उत्तम है। आप सब विषयों के ज्ञाता हैं। कृपया बताइये कि तारक को मारने का उपाय क्या है?"

"हमें ब्रह्मा की सलाह लेना उचित होगा। उसके उत्थान का कारण वे ही हैं।" बृहस्पति ने बताया।

इस पर सब लोगों ने मिल कर ब्रह्मा से तारक के वध का उपाय पूछा।

"शिवजी के द्वारा उत्पन्न व्यक्ति के हाथों में ही तारक मर सकता है। मैंने उसे यह वर दिया है। सतीदेवी की मृत्यु से वैरागी हो शिवजी कैलास पर तपस्या कर रहे हैं। वहीं सतीदेवी हिमवान की पुत्री के रूप में पैदा हो शिवजी की परिचर्या कर रही हैं। वह अपने मन में शिवजी को पति के रूप में मानती है। तुम लोग किसी उपाय से शिवजी के मन में पार्वती के प्रति मोह पैदा कर सको और उन दोनों का विवाह करा सको तो शिव और पार्वती के द्वारा पैदा होने वाला पुत्र तारक का वध करेगा।" यह सलाह देकर ब्रह्मा ने देवताओं को भेज दिया।

११६. प्राचीन लेखक

सन् १८६० में पुरावस्तुओं का संग्रह करने के लिए ईजिप्ट में जो खुदाई हुई उस वक्त यह दारुशिल्प प्रकट हुआ है। यह प्रतिमा "काअपेर" नामक एक प्राचीन लेखक की बतायी जाती है। "काअपेर" ईजिप्ट के शासक पाँचवें राजवंश के समय में याने क़रीब ४,५०० वर्ष पूर्व जीवित था। उस प्रतिमा की पुतलियों में स्फटिक तथा पलकों के लिए तांबे का पत्र इस्तेमाल किया गया है।

Photo by Anant Desai
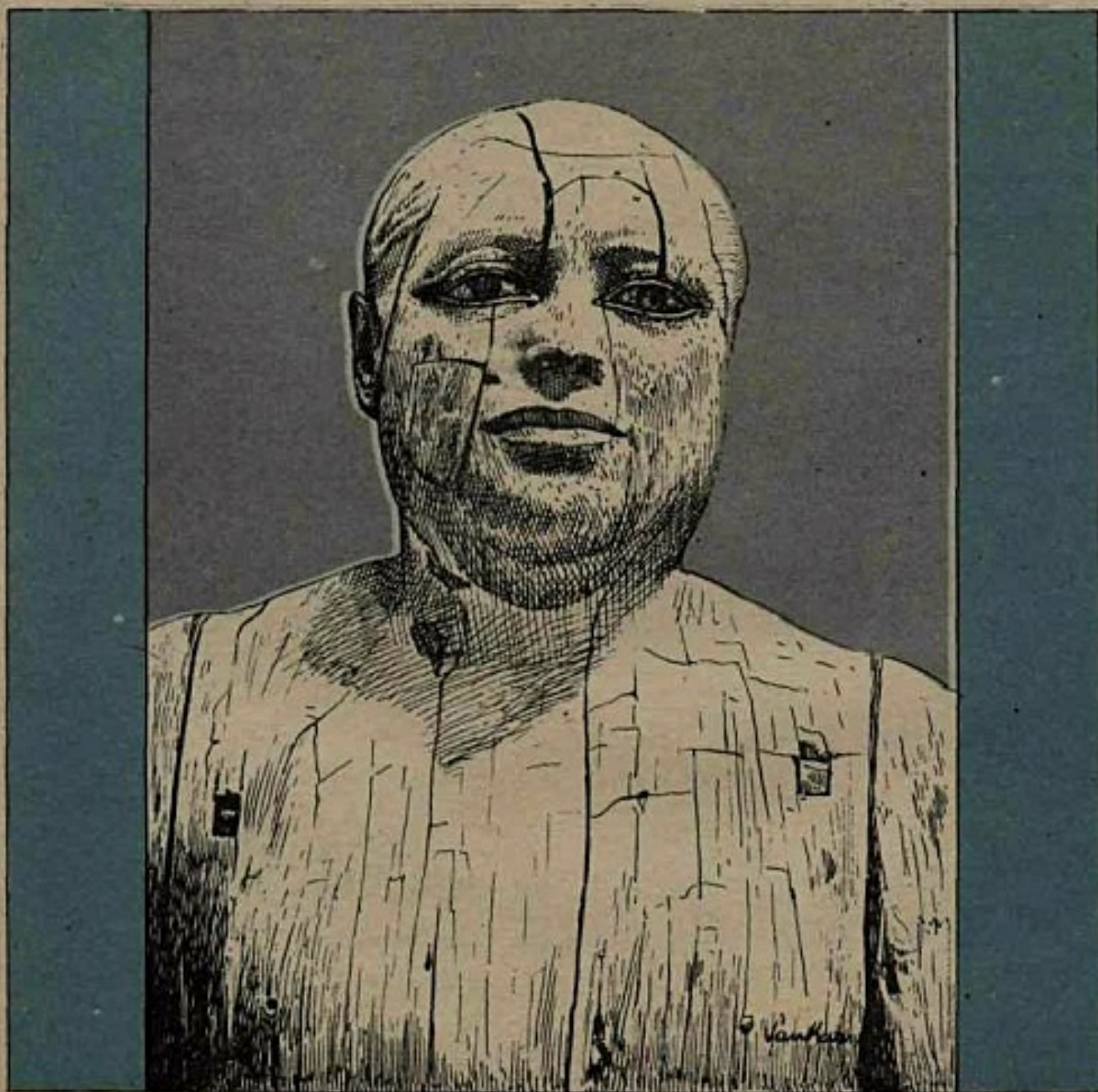
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फूल-फूल से बनता हार ।

प्रेषक :
बी. प्रकाश कश्यप,

Photo by A. V. Rangaiah
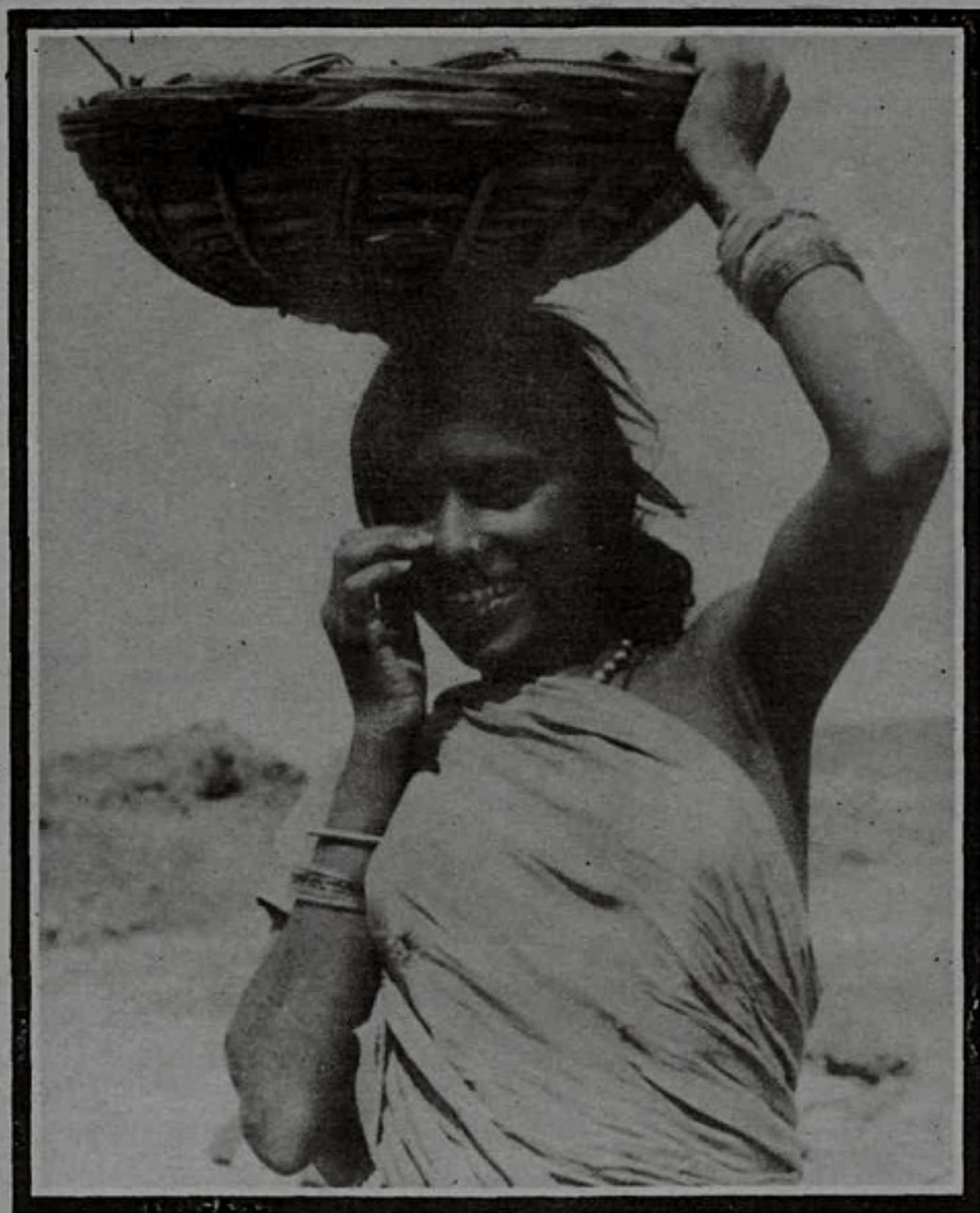
रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली-२२

मेहनत है जीवन का सार ॥

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता

अक्तूबर १९७१ :: पारितोषिक २०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख़ ५ अगस्त १९७१ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

दूसरा मुख पृष्ठ :
महाबलीपुरम के शिल्प

तीसरा मुख पृष्ठ :
सूरजमुखी फूल

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

Chiclets
Chiclets
Chiclets
12 PIECES

उसे अच्छी बातें
बचपन से ही
सिखाइए

फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट से नियमित रूप से ब्रश करने से मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न दूर ही रहती है।

क्योंकि फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट दाँतों और मसूढ़ों, दोनों की रक्षा करता है।
यह दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट है। इस टूथपेस्ट में मसूढ़ों की रक्षा के लिए कई खास तत्व मिले होते हैं।
मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न रोकने का सबसे बढ़िया तरीका है, दाँतों को नियमित रूप से सुबह और रात को फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट से ब्रश करना। आपके बच्चे को यह ज़रूरी बात सिखाने का समय यही है—उसका बचपन। जी हाँ, अभी, इसी उम्र में उनमें सीखने की बड़ी लगन रहती है। इसलिए यह शुभ शुरुआत आज ही से क्यों न की जाय!

फ़ोरहॅन्स से दाँतों की देखभाल सीखने में देर क्या सबेर क्या

मुफ़्त! "दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा" नामक रंगीन सूचना पुस्तिका १० भाषाओं में मिलती है। मँगवाने का पता है: मैसर्स डेन्टल एडवाइज़री ब्यूरो, पोस्ट बैग १००३१, बम्बई-१ बी आर

नाम: ____________________ उम्र ____________
पता: ______________________________
____

*कृपया (डाक-खर्च के लिए) २० पैसे के टिकट साथ भेजिए और इनमें से अपनी पसन्द की भाषा के नीचे रेखा खींच दीजिए: अंग्रेज़ी, हिन्दी, मराठी, गुजराती, उर्दू, बंगाली, तामिल, तेलगु, मलयालम, कन्नड़

फ़ोरहॅन्स
—दाँतों के एक डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट

92F-183D HIN

'C. 1'